विज्ञान परिचर्चा

वर्ष-14 अंक-01 त्रैमासिक पत्रिका | अप्रैल - जून 2024 | ISSN-2394-4501

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं
प्रौद्योगिकी परिषद-UCOST

पीपुल्स एसोसिएशन ऑफ
हिल एरिया लांचर्स
पहल, उत्तराखण्ड

भारतीय विज्ञान लेखक संघ
(इस्वा) उत्तराखण्ड प्रभाग

के संयुक्त तत्वावधान में
प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका
अंतर्भूत उत्तराखण्ड राज्य
विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद
समाचार पत्रक अप्रैल-जून, 2024

यह पत्रिका विज्ञान लोकप्रियकरण हेतु विज्ञान सुधी पाठकों के
आग्रह पर 'प्रकाशकीय कार्यालय' से नि:शुल्क प्रदान की जाती है।

विज्ञान परिचर्चा

अनुक्रमणिका

लेख	लेखक	पृष्ठ संख्या
विज्ञान का दूसरा नाम गतिशीलता	संपादकीय	3
विज्ञान ज्ञान की भारतीय परम्परा	मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी	4
एक था समुद्र उत्तराखण्ड में	अजय कुमार बियानी	9
नैनीताल की वनस्पतियां और उनका संरक्षण	बी.एस.कालाकोटी	13
सिलक्यारा सुरंग 'जिसने देश की सांसे रोक दी थीं'	विज्ञान परिचर्चा डेस्क	15
सिलक्यारा टनल हादसा: एक विशेषज्ञ का आंकलन	सोनाली कठैत	17
स्टेम शिक्षा और नई शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 में समन्वय	डी॰के॰ पाण्डेय	19
18वां उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी सम्मेलन	समाचार पत्रक यूकॉस्ट	22
उत्तराखण्ड @ 25 आदर्श चम्पावत	समाचार पत्रक यूकॉस्ट	28
हिमालयी विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी अकादमी का उद्घाटन	विज्ञान परिचर्चा डेस्क	35
उत्तराखण्ड में 'गोठ पद्धति' की जैविक कृषि में भूमिका	देवीदत्त चौनियाल	36
वैचारिक प्रदूषण	राजेन्द्र पाल शर्मा	39
वैज्ञानिक विभूति: डॉ॰ मीरा तिवारी	सोनाली कठैत	40
सेमीकंडक्टर चिप्स का निर्माण: आत्मनिर्भरता की ओर महत्वपूर्ण कदम	राजेन्द्र पाल शर्मा	45
पकवानों का स्वाद	दिनेश चन्द्र शर्मा	48
'अस्पताल' नवजीवन का मातृ स्थल भी है	डॉ. अरुण कुकसाल	50
विज्ञान समाचार		
मस्तिष्क में चिप	विज्ञान परिचर्चा डेस्क	53
प्रधानमंत्री सूर्य घर योजना : मुफ्त बिजली योजना	विज्ञान परिचर्चा डेस्क	54
भारत समुद्रयान 6000	विज्ञान परिचर्चा डेस्क	56
एम आय आर वी अग्नि मिसाइल का सफल परीक्षण	विज्ञान परिचर्चा डेस्क	57
अग्निकुल, अग्निबाण गौरवशाली उपलब्धि	विज्ञान परिचर्चा डेस्क	57
विज्ञान कविता: क्या, क्यों और कैसे ?	मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी	58

विज्ञान का दूसरा नाम गतिशीलता

संपादक की कलम से...

विज्ञान कब से इस दुनिया में है, यह तो निश्चित तौर पर कहा नहीं जा सकता है। अत्यंत प्राचीन काल में भी विज्ञान था उसके कई उदाहरण हमें आज मिलते हैं जैसे भारत की मोहन जोदड़ो की सभ्यता, मिश्र की ममी, चीन की दीवार इत्यादि। ये तो भौतिक प्रमाण हैं परन्तु कई ऐसे भी उदाहरण हैं जिनके भौतिक प्रमाण नहीं है। परन्तु वर्णन है ऐसा ही नासदीय सूत्र में बिग बैंग का होना या योग वशिष्ठ में भी लीलावती और सरस्वती का ब्रह्मांड में विचरण करते हुए अंधकारमय लोक (आधुनिक ब्लैक होल) से निकलकर एक के बाद एक कई लोकों में प्रवेश कर वापस आना। जैसे-जैसे वैज्ञानिक चेतना का विकास होना शुरू हुआ नित्य नई चीजें और तथ्य उभर कर आने लगे। इसके चलते मनुष्य का जीवन आसान होने लगा। जीवन को आसान बनाने में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास का बड़ा योगदान है। जिस तीव्र गति से प्रौद्योगिकी में नित नए बदलाव हो रहे हैं उतनी तीव्र गति से विज्ञान आगे नहीं बढ़ पा रहा है। विज्ञान जितना आगे बढ़ेगा उतनी ही प्रौद्योगिकी आगे बढ़ेगी। प्रौद्योगिकी का विकसित होना भी दोधारी तलवार के समान है यानि अच्छा और विनाशशील दोनों ही तरह-तरह के अस्त्र-शस्त्र, डीप फेक, ए-आई का दुरुपयोग, माइक्रोचिप आधारित जीवन समाज को त्रस्त करने के लिए काफी हैं। यह भी सत्य है कि अगर सुविधा बढ़ेगी तो विज्ञान और प्रौद्योगिकी का दुरूपयोग भी बढ़ेगा। अब हम एक ऐसी स्थिति में आ गए जहाँ पर विज्ञान और प्रौद्योगिकी की प्रगति पर ब्रेक अथवा अंकुश नहीं लगा सकते हैं। प्रौद्योगिकी की गतिशीलता का एक उदाहरण पिछले सप्ताह ही आया है कि हम ऑटोमोबाइल में पेट्रोल और डीजल पर आधारित थे। उसके बाद 'सीएनजी' गैस पर आए और अभी इलैक्ट्रिक ऑटोमोबाइल्स पांव ही जमा रहे हैं कि हाइड्रोजन ईंधन की बात होने लगी और इस दिशा में विश्व स्तर पर तेजी से प्रयास चल रहे हैं। एकाएक इनको पीछे छोड़कर अब अमोनिया ईंधन की बात होने लगी है और एलन मस्क ने घोषणा कर दी कि वह टेस्ला से इलैक्ट्रिक वाहन बनाने की बजाय नये ईंधन पर आधारित वाहनों पर जोर देंगे। विज्ञान के विकास के लिए जन भागीदारी आवश्यक है, जितनी अधिक जनभागीदारी बढ़ेगी उतना ही विज्ञान और प्रौद्योगिकी बढ़ेगी। इस अंक से हमारा प्रयास यह है कि भारतीय ज्ञान परम्परा से भी पाठकों को परिचित कराया जाय। इस हेतु हर अंक में इस पर आधारित आपको एक या दो लेख पढ़ने को मिलेंगे।

जनभागीदारी के लिए जरूरी है जन सामान्य को विज्ञान आसानी से समझ मेंआए या विज्ञान का लोकप्रियकरण किया जाय। विज्ञान परिचर्चा इस दिशा में एक छोटा कदम है। पत्रिका का प्रयास है विज्ञान के गहन और गम्भीर तथ्य आसानी से पाठकों के समझ में आ जाएं। सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि विज्ञान परिचर्चा के पाठक इसे कैसे लेते हैं। पाठकों के सुझाव और लेखकों की अप्रकाशित रचनाओं का भी स्वागत है।

विज्ञान ज्ञान की भारतीय परम्परा

मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी

यद्यपि प्राचीन भारतीय साहित्य में विशेषकर अध्यात्म के क्षेत्र में विज्ञान शब्द का प्रयोग अलग-अलग अर्थों में किया गया है, परन्तु प्रस्तुत लेख में हम अंग्रेजी के साइंस शब्द को हिन्दी पर्याय के रूप में ही विज्ञान शब्द लिख रहे हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि आज हम विज्ञान विषय के अन्तर्गत जो कुछ भी पढ़ या पढ़ा रहे हैं उसका ज्ञान हमें यूरोप से ही प्राप्त हुआ है। यूरोप में भी वैज्ञानिक सोच सुदूर ग्रीक काल में तो थी परन्तु ईसाई धर्म का प्रचार होने के बाद उस पर पर्दा पड़ गया। वह पर्दा उठा पन्द्रहवीं-सोलहवीं शताब्दी में हुए पुनर्जागरण या रेनेसाँ के कारण जब विद्वान धर्म की क़ैद से मुक्त होकर एक बार पुनः खुले ढंग से सोचने लगे।

यहाँ हमें विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के अन्तर को भी समझना होगा। बहुत लोग प्रौद्योगिकी को ही विज्ञान समझ लेते हैं और इसीलिये विज्ञान मानव के लिये वरदान है या अभिशाप जैसी अर्थहीन बहसों में उलझ जाते हैं। हम यह समझ सकते हैं कि कई बार प्रौद्योगिकी पहले विकसित होती है और बाद में उसके आधारभूत वैज्ञानिक सिद्धांत निरूपित किये जाते हैं परन्तु इसके विपरीत यह भी सत्य ही है कि अनेक अवसरों पर मनुष्य ने वैज्ञानिक सिद्धांत पहले समझे और बाद में उनके आधार पर वह विभिन्न प्रौद्योगिकियों का विकास कर पाया। इसलिये उचित होगा कि पहले हम विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी को परिभाषित कर लें। संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि प्रकृति के रहस्यों को समझने के लिये मनुष्य द्वारा विकसित निरीक्षण तथा परीक्षण आधारित तर्कपूर्ण निष्कर्ष ही विज्ञान है। दूसरी ओर मनुष्य का जीवन अधिक से अधिक सुख सुविधापूर्ण करने के लिये विकसित किये जाने वाले उपायों का नाम प्रौद्योगिकी है।

विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के इस अन्तर को हम चंद छोटे-छोटे उदाहरणों से समझ सकते हैं। नर वानर से मनुष्य बनने के काल में मानव ने समझा कि उसके पास पत्थर उठा कर फेंकने की शक्ति है जो अन्य प्राणियों में नहीं होती। पत्थर फेंक कर पेड़ से फल अधिक सरलता से गिराये जा सकते हैं या किसी अन्य प्राणी को घायल किया या मारा जा सकता है। यह भी अनुभव हुआ कि गोल मटोल पत्थर के स्थान पर नुकीला धारदार पत्थर अधिक कारगर होता है। इस ज्ञान के आधार पर पत्थरों के शस्त्र बनाने की प्रौद्योगिकी का विकास हुआ। परन्तु इसी के बाद अनेक प्रकार के पत्थरों में से कौन सा अधिक उपयुक्त होगा यह जानने के लिये विभिन्न पत्थरों के गुण और दोषों का जो अध्ययन मनुष्य ने किया वह विज्ञान है। पत्थर रगड़ कर अग्नि उत्पन्न की जा सकती है इसलिये वैसा करना प्रौद्योगिकी है परन्तु चकमक पत्थर की खोज विज्ञान है। किसी गुफा में जा कर वर्षा से या शीत से बचा जा सकता है। इस निरीक्षण के आधार पर हम भी पत्थरों पर पत्थर रच कर या मिट्टी के घर बना सकते हैं, यह प्रौद्योगिकी है पर यह बचाव क्यों होता है यह समझना विज्ञान है। इससे भी आगे दिन-रात का होना, मौसम बदलना, रात में तारों के स्थानों में परिवर्तन, सूर्योदय तथा सूर्यास्त के स्थानों में परिवर्तन, सूर्योदय से सूर्यास्त की समयावधि में अन्तर, पेड़ों का उगना, प्राणियों का अंडों से या बिना अंडों के जन्म लेना ऐसे सैकड़ों क्षेत्र मनुष्य के सामने आये जिसने उसकी बुद्धि तथा तर्क शक्ति को प्रेरणा दी और भाँति-भाँति के वैज्ञानिक विचारों का विकास हुआ। हम यह भी देखते हैं कि जिन समाजों अथवा समुदायों में प्रौद्योगिकी का विकास हुआ उन्हीं में वैज्ञानिक विचारधाराएँ भी पनपीं। प्राचीन काल में ग्रीक, मिस्री, चीनी, मेसोपोटामियाई, माया तथा भारतीय सभ्यताओं को हम प्रमाणस्वरूप पाते हैं।

भारतीय विज्ञान ज्ञान की परंपरा के बारे में जब सर्वसाधारण लोग बात करते हैं तब हमारे सामने दो प्रकार की विचारधाराएँ दिखाई देती हैं। एक विचारधारा मानती है कि हमें आज का सारा ज्ञान यूरोप से प्राप्त हुआ है। अंग्रेज इस देश में आये उन्होंने राज किया। हमें विज्ञान पढ़ाया तब हमें संसार की कुछ समझ आई। नहीं तो उसके पहले हमारे पूर्वज केवल वेद मंत्र रटते, अंधविश्वासों में डूबे तथा एकदम जाहिल गँवार लोग थे। इसके विपरीत एक दूसरी विचारधारा भी बड़े ज़ोर शोर से चलती है कि हमारे पूर्वज ऋषि मुनियों को आज के सारे ज्ञान का पता था। वेदों में वह सब है जो आज के वैज्ञानिकों ने खोजा है और वह सब भी है जो आज के वैज्ञानिकों को अभी पता नहीं चला है। अंग्रेज और जर्मन हमारे वेदों को चुरा कर ले गये और उन्हीं को पढ़-पढ़ कर वैज्ञानिक आविष्कार करते जा रहे हैं और हमें सिखा रहे हैं। ये दोनों ही विचारधाराएँ अतिवादी और एकांगी हैं। अतएव अवैज्ञानिक हैं। ये विचारधाराएँ उन लोगों द्वारा प्रस्तुत की जाती हैं जिन्होंने इस सम्बन्ध में कोई अध्ययन नहीं किया होता। इन दो विपरीत धाराओं के परे एक तीसरी विचारधारा है जो इस बात का पता लगाने का प्रयास करती है कि वास्तव में प्राप्त प्रमाण क्या बताते हैं। हमें दो प्रकार के वैज्ञानिक प्रमाण उपलब्ध होते हैं। एक तो हैं पुरातात्विक प्रमाण अर्थात् प्राचीन भारतीयों द्वारा भिन्न-भिन्न कालों में क्या-क्या और कैसे-कैसे निर्माण किया गया उन सबका प्रात्यक्षिक दर्शन। हमारे पूर्वजों द्वारा बनाये गये नगर, मकान, सडकें, समुद्री व्यापार के लिये प्रयुक्त होने वाली नौकाओं की गोदियाँ, मूर्तियाँ, सिक्के, शिलालेख, प्रयोग किये गये पत्थर, रत्न, धातुएँ, तैयार की गई ईंटें आदि सारी सामग्री 'हाथ कंगन को आरसी क्या' के रूप में उत्खननों में प्राप्त होती हैं। ये प्रमाण वास्तव में विज्ञान के नहीं परन्तु प्रौद्योगिकी के प्रमाण अधिक होते हैं। लेकिन सहज ही कल्पना की जा सकती है कि उस स्तर के प्रौद्योगिक विकास के लिये आवश्यक वैज्ञानिक पृष्ठभूमि अवश्य उपलब्ध रही होगी। उस वैज्ञानिक पृष्ठभूमि के लिये हमें दूसरे प्रकार के प्रमाण मिलते हैं और वे हैं विभिन्न वैज्ञानिक विषयों का विवेचन करने वाले सैद्धान्तिक ग्रंथ गणित (अंक गणित, बीज गणित, ज्यामिति, कलन आदि), खगोल विज्ञान, कृषि विज्ञान, धातु विज्ञान, शिला विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान, मनोविज्ञान, समाज विज्ञान, भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, जीव विज्ञान, गंध विज्ञान, निर्माण विज्ञान (मूर्ति, भवन, नगर, पथ , बांध, पुल, सुरंग आदि) आदि विज्ञान की अनेक शाखाओं का वर्णन करने वाले सिद्धांत ग्रंथ उपलब्ध हैं, जिनसे हम उन उन क्षेत्रों में भारतीय वैज्ञानिकों की सोच कैसी थी इसका अध्ययन कर सकते हैं। यह विषय बहुत व्यापक है इसलिये हम यहाँ इसके केवल कुछ पक्षों का एक संक्षिप्त अवलोकन ही कर सकते हैं।

सृष्टि की उत्पत्ति

सृष्टि की उत्पत्ति के बारे में प्राचीन यूरोपीय परम्परा के विचारों का निचोड़ हम ग्रीक दार्शनिक अरस्तू (एरिस्टॉटल, ई.पू. 384 से 322) के ग्रंथों में पाते हैं। उन्होंने सृष्टि में चार मूल गुण माने। वे हैं ऊष्मा, ठंढक, नमी तथा शुष्कता। इन चार मूल गुणों के आधार पर उन्होंने चार मूल तत्वों की कल्पना की। वे हैं- (1) अग्नि- ऊष्मा तथा शुष्कता, (2) वायु- ऊष्मा तथा नमी, (3) पृथ्वी-ठंढक तथा शुष्कता एवं (4) जल- ठंढक तथा नमी। उनके अनुसार सृष्टि के प्रत्येक पदार्थ में इन चारों का भिन्न-भिन्न मात्रा में समावेश होता है। इतना ही नहीं ये सभी एक दूसरे से उत्पन्न होते हैं तथा प्रत्येक दूसरे में गुप्त रूप से स्थित रहता है। इसलिये इन तत्वों की मात्रा कम या अधिक हो जाये तो पदार्थ का स्वरूप बदल जाता है। अरस्तू ने इसे जल के वाष्पीकरण से समझाया। जब जल का अग्नि से संयोग होता है तो जल वायुरूप (भाप) हो जाता है । फिर भी कुछ पृथ्वी तत्व (उसमें घुला पदार्थ) शेष रह ही जाता है। भारतीय विचारक सृष्टि की उत्पत्ति का विचार करते समय चार के स्थान पर पाँच मूल तत्वों की कल्पना करते हैं। अग्नि, वायु, जल तथा पृथ्वी के अतिरिक्त वे एक आकाश तत्व का अस्तित्व स्वीकार करते हैं । किंतु इन तत्वों के आधारभूत गुण यूरोपीय विचारकों के शुष्कता या ऊष्मा जैसे गुणों के स्थान पर मनुष्य की पंच ज्ञानेन्द्रियों की पाँच अनुभूतियों अर्थात् शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध को मानते हैं। पंच तत्व जिन्हें हमारे यहाँ पंच महाभूत कहा गया है उनका तथा अनुभूतियों का सम्बन्ध निम्न सारणी से स्पष्ट किया जा सकता है ।

महाभूत	अनुभूति
१. आकाश	शब्द (केवल १ गुण)
२. वायु	स्पर्श तथा शब्द, (२ गुण)
३. अग्नि	रूप तथा शब्द एवं स्पर्श, (३ गुण)
४. जल	रस तथा शब्द, स्पर्श एवं रूप (४ गुण)
५. पृथ्वी	गंध तथा शब्द, स्पर्श, रूप एवं रस (५ गुण)

इतना ही नहीं भारतीय चिन्तकों ने यह भी प्रतिपादित किया कि ये पंच महाभूत एक से दूसरे क्रम में उत्पन्न हुए हैं। तैत्तरीयोपनिषद् (ब्रह्मानन्दवल्ली, अनुवाक् १) में यह उत्पत्ति क्रम निम्न प्रकार से बताया गया है ।

तस्माद्वा एतस्मादात्मन् आकाशः सम्भूतः।
आकाशात् वायुः।
वायोरग्निः।
अग्नेरापः।
अद्भ्यः पृथिवी।

अर्थात् सर्वप्रथम आकाश तत्व उत्पन्न हुआ। उसी आकाश तत्व से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल तथा अंत में जल तत्व से पृथ्वी तत्व की उत्पत्ति हुई।

गणित

मनुष्य के बौद्धिक विकास के तीन महत्वपूर्ण पहलू हैं। वे हैं भाषा का विकास अर्थात् जो ज्ञान किसी ने प्राप्त किया उसे दूसरे तक वाणी के माध्यम से पहुँचाने की पद्धति, गणना अर्थात् अंक शास्त्र तथा लिपि अर्थात् अपने ज्ञान को विशिष्ट चिन्हों की सहायता से आने वाली पीढ़ियों के लिये भी सुरक्षित रखना। इन तीनों ही क्षेत्रों में भारतीय बहुत उन्नत रहे हैं। हमारे सबसे प्राचीन ग्रंथ वेदों में ही हमें गणना तथा अंक विद्या के उल्लेख प्राप्त होते हैं। वैदिक काल में यज्ञ संस्था का बड़ा विकास हुआ। किस यज्ञ के लिये कितनी भूमि चाहिये, कितने कुंड बनेंगे, उन कुंडों का आकार तथा आकृतियाँ क्या होंगी, उतने आकार तथा आकृतियों के लिये किस आकार की कितनी ईंटें लेनी पडेंगी, इन सबकी अत्यन्त सूक्ष्म गणना के कारण गणित तथा ज्यामिति का बहुत विकास हुआ। पुरातात्विक प्रमाणों में भी हमें हडप्पा कालीन सभ्यताओं में निश्चित आकार तथा आकृतियों के पथ, स्नानागार, भवन, वेदियाँ आदि प्राप्त होते हैं जिनका निर्माण गणित के विकास के बिना सम्भव नहीं। आगे चलकर ऐतिहासिक काल में भारत में गणित का बहुत अधिक विकास हुआ। विशेषकर भारतीय गणितज्ञों ने खगोल वैज्ञानिक समस्याओं के अध्ययन में गणित का बहुत उपयोग किया। लगभग (ई.पू. 1300), बोधायन (ई.पू. आठवीं शती से पहले), आर्यभट्ट (476-550 ई.), वराहमिहिर (499-587 ई.), ब्रह्मगुप्त (598-668 ई.), भास्कर प्रथम (सातवीं शताब्दी), लल्ल (720-790 ई.), महावीर (राष्ट्रकूट राजा अमोघवर्ष नृपतुंग, 815-898 ई. के काल में), भास्कराचार्य द्वितीय (बारहवीं शताब्दी) आदि कुछ महत्वपूर्ण गणितज्ञों के नाम उल्लेखनीय हैं।

खगोल विज्ञान

खगोल विज्ञान अथवा ज्योतिर्विज्ञान के क्षेत्र में भारतीय वैज्ञानिकों का अध्ययन तथा ज्ञान प्राचीन काल से ही बहुत बढ़ा चढ़ा रहा है। वेदों में आकाशीय नक्षत्रों तथा ग्रहों के परिगणनों के अनेक उल्लेख प्राप्त होते हैं। लोकमान्य तिलक ने जब 'द ओरायन' पुस्तक लिखी तथा वेद के समय का निर्धारण किया तब उन्होंने वेदों में आये हुए ओरायन अर्थात् मृगशिरा नक्षत्र के उल्लेखों तथा गतियों को ही आधार बनाया था। बाद में उन्होंने 'द आर्क्टिक होम इन द वेदाज' पुस्तक में भी वैदिक सूक्तों में आये हुए आकाशीय तारिकाओं के परिभ्रमण के वर्णन के आधार पर ही यह सिद्धांत स्थापित किया था कि ये सूक्त उत्तर ध्रुव प्रदेश में ही लिखे जा सकते हैं। ऐतरेय ब्राह्मण (वेद वांग्मय में संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक तथा उपनिषद आते हैं जिनका काल 450 से 1000 ई.पू. के बीच माना जाता है) से ही ज्ञात होता है कि उस आरम्भिक काल में ही वैदिक भारतीय इस निष्कर्ष पर पहुँच गये थे कि सूर्य एक है और वह कभी अस्त नहीं होता। "स वा एष न कदाचनास्तयेति नादेति" (ऐतरेय ब्राह्मण, 3-44) अर्थात् यह सूर्य न अस्त होता है न उदित (काणे, पांडुरंग वामन, 1973) धर्मशास्त्र का इतिहास (मूल अंग्रेज़ी पुस्तक "हिस्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र" का हिन्दी अनुवाद, चतुर्थ भाग, पृ. 256)।

खगोल वैज्ञानिक आर्यभट्ट (476-550 ई.) ने आकाश में पृथ्वी की गोल तथा निराधार स्थिति का उल्लेख किया है। आर्यभट्ट पृथ्वी के घूमने के आविष्कारक माने जाते हैं। उन्होंने कोपरनिकस से बहुत पहले ही यह कह दिया था कि सूर्य पृथ्वी की परिक्रमा नहीं करता वरन् पृथ्वी ही सूर्य के चारों ओर घूमती है। उन्होंने लिखा है कि जिस प्रकार नाव में बैठे व्यक्ति को ऐसा लगता है कि किनारे के वृक्ष विपरीत दिशा में चल रहे हैं वैसे ही लंका से स्थिर नक्षत्र पश्चिम की ओर जाते दिखाई देते हैं। आज विश्व के खगोल वैज्ञानिक निरीक्षणों के लिये जो स्थान ग्रीनविच को देते हैं वही स्थान आर्यभट्ट लंका को देते थे। परन्तु दुर्भाग्य से आर्यभट्ट के इस विचार को किसी ने भी नहीं माना और उनके विचार गुमनामी में ही रह गये। ऐसा ही एक अन्य उदाहरण है खगोल वैज्ञानिक वराहमिहिर का। अपनी बृहत्संहिता में वे चंद्र तथा सूर्य ग्रहण का कारण बताते हुए लिखते हैं कि

भूच्छायां स्वग्रहणे भास्करमर्कग्रहे प्रविशतीन्दुः (5-8)

अर्थात् चन्द्र ग्रहण में चन्द्र पृथ्वी की छाया में आ जाता है तथा सूर्य ग्रहण में चन्द्र सूर्य में प्रविष्ट हो जाता है। लेकिन वराहमिहिर का यह ज्ञान चला नहीं और लोग राहु केतु की कहानियों में ही उलझे रहे।

चिकित्सा विज्ञान

चिकित्सा विज्ञान अर्थात् आयुर्वेद उपवेद माना जाता है। इसका विवरण भी हमें वेद वांग्मय से ही मिलने लगता है। अथर्ववेद का प्रमुख विषय ही चिकित्सा विज्ञान है। आयुर्वेद रोग मुक्ति के लिये मणि, मंत्र तथा औषधि तीनों के ही महत्त्व को स्वीकार करता है। साथ ही वह फलित ज्योतिष को भी उपचार का एक कारक

मानता है। आज की वैज्ञानिक दृष्टि उसे भले ही न स्वीकार करे पर वे वैज्ञानिक इसे मानते थे। शुद्ध चिकित्सा की दृष्टि से मनुष्य की समस्त शारीरिक क्रियाओं को कफ, वात तथा पित्त इन तीन प्रकृतियों के आधार पर वर्गीकृत करना आयुर्वेद की देन है। शल्य चिकित्सा के क्षेत्र में सुश्रुत (ई.पू. 800–700) तथा औषधि के क्षेत्र में चरक (ई.पू. दूसरी शताब्दी) अत्यन्त महत्त्वपूर्ण नाम हैं। इनके अतिरिक्त वाग्भट (600–650 ई.), माधवकर (७वीं शताब्दी), शाङ्र्गधर (13वीं से 14 वीं शताब्दी) तथा भावमिश्र (15वीं शताब्दी) आदि अनेक आयुर्वेद के आचार्य ज्ञात हैं।

खनिज तथा धातु विज्ञान

हमें हडप्पा पूर्व काल से ही भारत में खनिज तथा धातुओं के प्रयोग के पुरातात्विक प्रमाण प्राप्त होने लगते हैं। ताँबा सबसे प्राचीन ज्ञात धातु है। भारतीय उपमहाद्वीप में ताँबे के प्रमाण बलूचिस्तान के मेहरगढ़ में 7786 वर्ष पूर्व के मिले हैं। उसी प्रकार ताँबे और काँसे (ताँबे तथा रांगे का मिश्रातु) का प्रयोग अफ़ग़ानिस्तान के कन्दहार प्रान्त में मुंडीगाक में 7000 वर्ष पूर्व हुआ मिलता है) बिस्वास, ए. के., 1996 (मिनरल्स एंड मेटल्स इन एंशिएंट इंडिया, भाग १, पृ. ६)। हेगडे, के.टी.एम. (ऐन इंट्रोडक्शन टु एंशिएंट इंडियन मेटलर्जी, 1991, पृ. 2) लिखते हैं कि भारत में ताम्रयुगीन बस्तियों के प्रमाण हिमालय की तलहटी से दकन के पठार तक और अरब सागर तट से गंगा यमुना दोआब तक मिलते हैं। वैसे भी हडप्पा पूर्व काल से ही ताँबे की बनी मातृका देवियों के टाँक (कॉपर प्लेट्स्) कई स्थानों पर प्राप्त होते हैं।

ऋग्वेद का काल भी ताम्र युग है क्योंकि तब तक मनुष्य ने लोहा नहीं खोजा था। परन्तु यजुर्वेद काल तक लोहा ज्ञात हो गया था। कृष्ण यजुर्वेद की तैत्तरीय संहिता के चौथे कांड के पाँचवें प्रपाठक में तथा शुक्ल यजुर्वेद की वाजसनेयी संहिता के अठारहवें अध्याय के तेरहवें सूक्त में ईश्वर से पाँच धातुओं की याचना की गई है।

हिरण्यं च मे सीसं च मे श्यामं च मे त्र्यपुश्च मे लोहं च मे

मुझे हिरण्य (सोना), सीस (सीसा या लेड), श्याम (लोहा), त्र्यपु (रांगा या टिन) तथा लोह (ताँबा) दो।

उस काल में लोह शब्द लोहे के नहीं वरन् या तो ताँबे के लिये या फिर किसी भी धातु के लिये प्रयुक्त होता था।

लगभग 2000 से 1200 ई.पू. काल में संसार भर में लोहे का प्रयोग प्रारम्भ हुआ। भारत में लोहे की प्राचीनतम उपलब्धियाँ अतरंजीखेडा (जिला एटा, उत्तर प्रदेश, ई. पू. 19वीं शताब्दी) तथा हल्लूर (हावेरी जिला, कर्नाटक, ई.पू. 9वीं शताब्दी) से प्राप्त हुई हैं। बाद में तक्षशिला (पाकिस्तान), रोपड़ (हरियाणा), हस्तिनापुर, आलमगीरपुर, कौशाम्बी तथा वाराणसी (उत्तर प्रदेश) एवं उज्जैन (मध्य प्रदेश) के उत्खननों में भी लोहे के अनेक उपकरण मिले हैं (हेगड़े, 1991, पृ. 37)। गुजरात के सूरत जिले में तापी नदी के दक्षिण में धतवा नामक स्थान पर हुए पुरातात्विक उत्खनन में ई.पू. तीसरी तथा चौथी शताब्दी के लौह निष्कर्षण केंद्र पाये गये हैं।

आगे चलकर लोहा तथा इस्पात बनाने की विधियाँ भी विकसित हुई हैं, जिनके प्रमाण दिल्ली में मेहरौली स्थित चौथी शताब्दी ई. का लौह स्तम्भ, कोणार्क मन्दिर के दसवीं शताब्दी के लोहे के धरण, धार (मध्यप्रदेश) का बारहवीं शताब्दी का स्तम्भ, कर्नाटक के शिमोगा जिले में कोदाचाद्रि का स्तम्भ तथा माउंट आबू का स्तम्भ हैं।

सोना धातु भी हडप्पा पूर्व काल से ही ज्ञात है। कौटिल्य (ई. पू. 376–286) ने अपने अर्थशास्त्र में सुवर्ण धातु का बड़ा विस्तृत वर्णन किया है। कर्नाटक के हट्टी क्षेत्र में प्राचीन काल से सोने के निक्षेप ज्ञात थे। यहाँ की प्राचीन खानों में प्रयुक्त लकड़ी की कार्बन डेटिंग से पता चलता है कि यहाँ सोना निकालने का काम 4000 वर्ष पूर्व प्रारम्भ हो गया था (हिस्टॉरिक माइनिंग इन इंडिया, जी.एस. आइ., 2021, पृ. 13)। कर्नाटक की कोलार की खान भी बहुत पुरानी है ।

सीसा (प्राचीन नाम सीस) तथा जस्ता (प्राचीन नाम यशद) भी बहुत प्राचीन काल से ज्ञात धातुएँ थीं। जिस प्रकार ताँबा तथा राँगा मिला कर काँसा मिश्रातु (एलॉय) बनता था वैसे ही ताँबा तथा जस्ता मिला कर पीतल बनाया जाता था। राजस्थान के उदयपुर जिले में जव्हार नामक स्थान पर सीसे तथा जस्ते की खानें हैं। यहाँ प्राचीन खनन के बहुत अवशेष प्राप्त हुए हैं। इतना ही नहीं यहाँ पर खनिजों से धातु निकालने की भट्टियाँ तथा अन्य उपकरण भी मिले हैं। उसी प्रकार राजस्थान में ही रामपुरा–दरीबा और रामपुरा–अगूचा क्षेत्रों में भी प्राचीन खनन के प्रमाण मिले हैं।

शिला विज्ञान

शिलाओं का उपयोग भवन तथा मूर्ति निर्माण में प्राचीन काल से होता रहा है। मौर्य सम्राट अशोक का बालुकाश्म (सैंडस्टोन) से बना सिंह शीर्ष स्तम्भ सभी जानते हैं। मौर्य काल से ही शिलाओं की मूर्तियों का मिलना प्रारम्भ हो जाता है। स्वभावत: किस कार्य के लिये कौन सी शिला उपयुक्त होगी इसका विज्ञान भी विकसित हुआ। इसके वर्णन हमें अनेक ग्रंथों जैसे नारदीय संहिता, अपराजितपृच्छा, मानसोल्लास, रूपमण्डन, अग्नि पुराण, विष्णुधर्मोत्तर पुराण आदि में मिलते हैं। इनमें शिलाओं के गुण दोष

वर्णन तथा वर्गीकरण भी किये गये हैं। उदाहरणार्थ उत्तम ग्राह्य शिला के गुण बताते हुए विष्णुधर्मोत्तर पुराण (3.10.3-4) कहता है कि एकवर्णा घनां स्निग्धां निमग्नां च तथा क्षितौ।

घातातिमात्रस्फुटनां ढां मृद्वीं मनोरमाम्॥
कोमलां सिकताहीनां प्रियां ग्मनसोरपि।

एक अच्छी शिला वह है जो एक समान रंग वाली, चिकनी, भूमि के अन्दर से खोद कर निकाली हुई, इतनी दृढ़ कि उसे तोड़ने के लिये अनेक आघात करने पड़ें फिर भी मृदु, बालूरहित तथा मन और नेत्रों को प्रिय लगने वाली हो।

शिलाओं के प्रयोग के पुरातात्विक प्रमाण तो भरे पड़े हैं। कुषाण काल की मथुरा कला के कलाकार सफेद चित्तीदार लाल बालुकाश्म (स्पॉटेड रेड सैंडस्टोन) का खूब प्रयोग करते थे। आगे चलकर उसी पत्थर से कुतुबमीनार, दिल्ली का पुराना किला, आगरे का किला और दिल्ली का लाल किला भी बने हैं। पूर्वी उत्तर प्रदेश में चुनार का बालुकाश्म प्रयुक्त होता रहा है। कोणार्क का सूर्य मन्दिर खोंडालाइट का, महाबलीपुरम् के मन्दिर ग्रेनाइट के, अजन्ता, एलोरा तथा एलीफेंटा की गुफाएँ, मन्दिर तथा मूर्तियाँ बेसाल्ट की बनी हैं। इन सबके निर्माण के पीछे शिला विज्ञान, रंग विज्ञान तथा स्थापत्य विज्ञान की प्रगति स्पष्ट रूप से प्रकट होती है।

रत्न विज्ञान

जो खनिज अथवा शिला अत्यन्त आकर्षक हो, टिकाऊ और दुर्लभ हो उसे हम रत्न कहते हैं। मूँगा तथा मोती दो और ऐसे रत्न हैं जो खनिज अथवा शिला नहीं होते वरन् जीवों द्वारा निर्मित होते हैं। रत्नों का प्रयोग सभी सभ्यताओं में प्रारम्भ से ही होता रहा है। भारत में भी हडप्पा काल से रत्न मिलने लगते हैं। स्वाभाविक रूप से रत्नों का अध्ययन, गुण-दोष विवेचन, असली नकली रत्नों की पहचान आदि विषयों का बड़ा विस्तृत वर्णन करनेवाले ग्रंथ हमें ज्ञात हैं। चूँकि हम यहाँ उनके विस्तार में नहीं जा सकते अत: केवल एक उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं। कौटिल्य अपने अर्थशास्त्र के द्वितीय अधिकरण के ग्यारहवें अध्याय के चौतीसवें गद्य श्लोक में रत्नों अथवा मणियों के गुणों का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि

षडश्रश्चतुरश्रोवृत्तो वा तीव्ररागसंस्थानवानच्छ: स्निग्धो गुरुरर्चिष्मानन्तर्गतप्रभ: प्रभानुलेपी चेति मणिगुणा:॥

षडश्र (छ: कोनों वाली), चतुश्र (चार कोनों वाली), वृत्त (गोलाकार), तीव्रराग (गहरे रंग वाली), संस्थानवान (जिसकी बनावट आभूषण में लगाने योग्य हो), अच्छ (निर्मल), स्निग्ध (चिकनी), गुरु (भारी), अर्चिष्मान (चमकदार), अन्तर्गतप्रभ (बीच में ही चंचल प्रभा वाला-खनिज विज्ञान में हम जिसे 'प्ले ऑफ कलर' कहते हैं) तथा प्रभानुलेपी (जो अपनी प्रभा से पास रखी वस्तु को भी प्रकाशित करे) ये मणियों के ग्यारह गुण होते हैं।

इसी प्रकार मणियों के दोष बताते हुए वे लिखते हैं कि मन्दरागप्रभ: सशर्कर: पुष्पाच्छिद्र: खण्डो दुर्विद्धो लेखाकीर्ण इति दोषा:॥35

मन्दराग (हल्का रंग), सशर्कर (खरखरी या खुरदुरी सतह), पुष्पाच्छिद्र (जिसमें छोटे-छोटे छेद या काट हों), खण्ड (जो अनुपयुक्त स्थान पर छेदी गई हो) तथा लेखाकीर्ण (विभिन्न रेखाओं से घिरी)।

प्राचीन साहित्य में बहुत सारे रत्नों के नाम प्राप्त होते हैं जिनमें मुख्य हैं वज्र (हीरा), माणिक्य (लाल, रूबी), कुरुविंद (कोरंडम), नीलमणि (नीलम, सैफायर), मरकत (पन्ना, एमराल्ड), गोमेद (गार्नेट), वैदूर्य (बेरील), पद्मराग (पुखराज, टोपाज), स्फटिक (रॉक क्रिस्टल), प्रवाल (मूँगा, कोरल), मुक्ता (मोती) आदि।

उपसंहार

हम यहाँ केवल कुछ ही विज्ञान शाखाओं के बारे में चर्चा कर पाये हैं परन्तु इनके अतिरिक्त भी अन्य अनेक विषयों से संबंधित प्रभूत सामग्री हमें उपलब्ध हैं। अनेकानेक विद्वान भारतीय ज्ञान की परम्परा के विभिन्न पक्षों पर अनुसंधान करते आ रहे हैं और आज भी कर रहे हैं। ऐसा होते हुए भी जब हम कहते हैं कि आज का हमारा विज्ञान का ज्ञान हमें यूरोप से प्राप्त हुआ है तो प्रश्न उठता है कि ऐसा क्यों? हमारा ज्ञान हमें विरासत में क्यों नहीं मिला? इस पर विचार करें तो अनेक कारण दिखाई पड़ते हैं। एक तो राजनीतिक उथल पुथल तथा विशेषकर अत्याचारी आक्रमणकारियों द्वारा विशाल पुस्तकालयों तथा विश्वविद्यालयों को नष्ट कर दिया जाना, दूसरे विभिन्न प्रौद्योगिकियों को विभिन्न जन्मना जातियों से जोड़ दिया जाना, नवनवीन वैज्ञानिक अनुसन्धान न हो पाना, प्राप्त ज्ञान को गुप्त रखने की प्रवृत्ति आदि कुछ कारक स्पष्ट होते हैं। फिर भी भारत में अंग्रेज़ी साम्राज्य आने तक हमारी ज्ञान परम्पराएँ टिकी थीं परन्तु अंग्रेजों ने एक नीति के तहत अपने यहाँ के माल की खपत के लिये भारत की निर्माण क्षमता समाप्त कर दी। इससे पारम्परिक ज्ञान भी खण्डित हो गया। आज निश्चित रूप से समय की आवश्यकता है कि संसार में जो विज्ञान विकसित हो रहा है उसे आत्मसात् करते हुए अपने पारम्परिक ज्ञान के सूत्रों को भी जोड़ कर रखा जाये।

गोमुख : यहाँ पर कभी समुद्र हुआ करता था

एक था समुद्र उत्तराखण्ड में

अजय कुमार बियानी

क्या आपने कभी ब्रीज रिवर, इयापेट्स, खान्टी, मेडीसिन होस्ट, मीरोविया, रहेइक, पोन्ट्स, थालासा नाम सुने हैं?

अच्छा चलिए इन नामों में से देखते हैं कि कौन से नाम के बारे में आपको जानकारी है- गायरोशिया, लेरोवा, कोलम्बिया, पेंथालासा, पानोटिया। ये नाम भी अपरिचित लग रहे हैं। कोई बात नहीं! अमेजोनिया, आर्कटिका, अर्गोलेंड, बाल्टिका, नेना, वालबारा, स्केलेविया नामों के बारे में आप कितने परिचित हैं? उत्तर अपेक्षित भी नहीं है। ये वो नाम हैं जो कभी समुद्र और महाद्वीपों के होते थे जो आज गुमनाम हो चुके हैं। पहला प्रश्न समुद्र के नामों का है, जो हमारी पृथ्वी पर किसी समय, अत्यंत प्राचीन काल, में थे, अब नहीं है और दूसरा और तीसरा प्रश्न महासागरों और महाद्वीपों से संबंधित है, ये भी कभी के लुप्त अथवा नष्ट हो चुके हैं। ऐसा ही एक समुद्र उत्तराखण्ड में भी था। गीता में भगवान कृष्ण ने मनुष्यों के संदर्भ में कहा था कि जो इस दुनिया में आया वह जाएगा भी। यहाँ पर कोई भी चीज या वस्तु स्थाई नहीं है। यही बात महाद्वीपों और महासागरों पर भी अक्षरस: लागू होती है। अन्तर इतना ही है कि हमारी आयु अल्प है और महाद्वीप एवं महासागर को बनने से लेकर नष्ट होने तक में करोड़ो वर्ष का समय लग जाता है।

वैसे तो उत्तराखण्ड के लगभग 200 करोड़ वर्षों से अधिक के भूगर्भीय इतिहास को देखें तो पता चलेगा कि यहाँ पर भी कई समुद्र रहे होंगे, जो समय के साथ काल के गर्त चले गए परन्तु अपने प्रमाण छोड़ गए। इन समुद्रों में सबसे नवीन समुद्र था टेथीस। इस समुद्र के परिवार का जीवन काल करीब 65 करोड़ वर्ष से अधिक का था। टेथीस अपनी अन्तिम यात्रा पर करीब 5.5 करोड़ वर्ष पूर्व निकला था और इसकी यात्रा की समाप्ति 4.0 से 5.0 करोड़ वर्ष पूर्व अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग समय पर हुई।

The Tethys Sea during the Triassic

क्या महाद्वीपों और महासागरों के जन्म और मृत्यु का चक्र वास्तविक है? चौकिए नहीं! महाद्वीप और महासागरों का जीवन चक्र मनुष्य के जीवन चक्र के ही समान है। समुद्र भ्रूण अवस्था से मृत्यु तक के चक्र में सतत लगे रहते हैं। उत्तराखण्ड भारत का एक पहाड़ी प्रदेश

है, जो विशालकाय अल्पाइन-हिमालय पर्वतमाला के अन्तर्गत आता है। उत्तराखण्ड में हिमालय का बहुत ही संतुलित विकास हुआ है। हिमालय को भू-वैज्ञानिक गुणों के आधार पर पाँच भागों में दक्षिण से उत्तर की ओर बांटा गया है। ये विभाग हैं- आउटर हिमालय, लेसर हिमालय, उच्च हिमालय, टेथियन हिमालय और सिंधू सूचर क्षेत्र। सिंधू सूचर क्षेत्र तिब्बत में स्थित है। अवशेष चार भाग या क्षेत्र भारत में स्थित है। हिमालय का सर्वांगीण विकास भी उत्तराखण्ड में ही हुआ है। कई समुद्रों के समाप्त होने के पश्चात आज हमें उत्तराखण्ड में चारों तरफ जमीन और पहाड़ दिखते हैं। भले ही हमें चारों तरफ पहाड़ दिखते हों, एक भूवैज्ञानिक को थोड़े-थोड़े अन्तराल के बाद उत्तराखण्ड में विस्मयकारी परिवर्तन इन पहाड़ों में देखने को मिलते हैं। टेथीस नामक समुद्र में बनी हुई शैलें हमें सूदूर उत्तर के उत्तराखण्ड में मिलती है अर्थात बद्रीनाथ, गंगोत्री, माना, मुनस्यारी की उत्तर दिशा में। आइये, आगे की चर्चा जारी रखने के पूर्व थोड़ा सा टेथीस समुद्र का इतिहास जान लें।

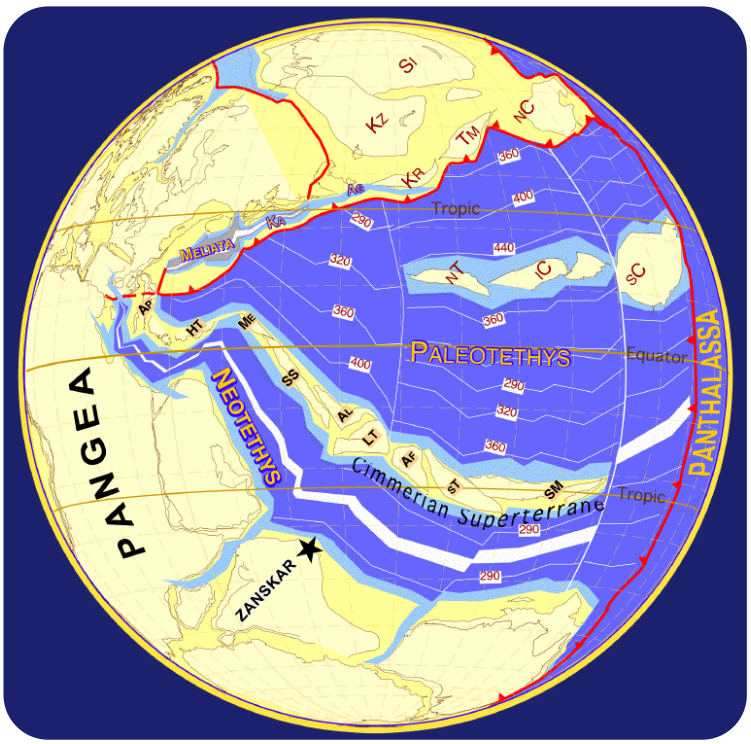

शैलों में पाये जाने वाले प्राचीन काल के जीवों के अवशेष, जिन्हें जीवाश्म के रूप में जाना जाता है, वो सामान्यतया समुद्री जीवों के मृत होने के पश्चात मलवे में दबने के कारण बनते हैं। समुद्र के अन्दर नदियों द्वारा लाया गया मलवा अथवा सैडीमेंट धीरे-धीरे जमा होता रहता है। पृथ्वी के अन्दर होने वाली आन्तरिक हलचलों के कारण जब समुद्र की तलहटी पानी के उपर उभर आती है तो नई भूमि का निर्माण होता है। यह नई भूमि कालान्तर में पहाड़ भी बन सकती है। भूमि में पाये जाने वाले जीवाश्मों से हमें समुद्र के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी यथा उस समय का मौसम, गहराई स्थिति आदि प्राप्त होती है।

टेथीस नामक समुद्र की कल्पना रोडेरिक मुरचीसन ने 1845 में काला सागर और अराल सागर के मध्य की थी। इसके बाद 1883 में आस्ट्रियन भूवेत्ता एडवर्ड स्वेस ने टेथीस नाम ग्रीक के पौराणिक पात्र के आधार पर दिया था। एडवर्ड स्वेस ने भारत से स्टार्ची द्वारा लाए गए जीवाश्मों और स्वयं के द्वारा एकत्रित कर गए जीवाश्मों में समानता देखी और एक ऐसे समुद्र की कल्पना करी जब सारे महाद्वीप पेंजिया नामक विशाल महाद्वीप में जुड़े हुए थे। यह विशाल महाद्वीप पेंजिया चारों तरफ से एक अत्यंत विशाल महासागर पेंथालासा से घिरा हुआ था। पेंजिया को हम महाद्वीपों का संयुक्त परिवार जैसा मान सकते हैं। पेंजिया के पूर्व सारे महाद्वीप बिखरे हुए थे और वे धीरे-धीरे 65-55 करोड़ वर्ष पूर्व के दौरान एकत्रित हुए। पेंजिया के पूर्व अल्प समय के लिए भी एक संयुक्त परिवार बना था, उसका नाम पेनोटिया था। इसके पूर्व नैना, उर, वालबारा भी संयुक्त परिवार थे। ऐसा भी देखा गया है कि सारे नहीं कुछ महाद्वीपों ने भी एकत्रित होकर छोटे संयुक्त परिवार का निर्माण करा था इसके उदाहरण आर्कटिका, कोलम्बिया इत्यादि रहे हैं।

स्वेस ने टेथीस की स्थिति पेंजिया महाद्वीप के मध्य में पूर्व से पश्चिम की ओर बताई थी। पेंजिया के उत्तरी हिस्से को लारेशिया नाम दिया गया और दक्षिणी को गोण्डवानालैंड। भारत, आस्ट्रेलिया, अन्टार्कटिका, अफ्रीका, दक्षिणी अमेरिका गोण्डवानालैंड के भाग रहे थे। स्वेस की कल्पना के अनुसार टेथीस समुद्र कम गहरा या उथला, लम्बा और कम चौड़ा था। यह वर्तमान काल की भूमध्य रेखा के आस-पास स्थित था। टेथीस सागर 35 करोड़ वर्ष अस्तित्व में आया था और काफी अन्तराल के बाद 5.5 करोड़ वर्ष पूर्व इसका अस्तित्व समाप्त होने लगा था। टेथीस की इस प्रारम्भिक परिकल्पना के पश्चात भूविज्ञान का विकास होने पर परिकल्पना में भी परिवर्तन होने लगे।

यह स्वभाविक ही था जैसे आपके 25-30 वर्ष पूर्व के मोबाइल फोन और आज के मोबाइल फोन स्मार्ट फोन में। एडवर्ड स्वेस ने टेथीस की परिकल्पना को स्थायित्व स्वरचित पुस्तक 'दास एन्टलीट्ज डेर ऐटडे' जिसका प्रथम प्रकाशन कई खण्डों में 1885-1909 के मध्य हुआ और इंग्लिश ट्रांसलेशन 'द फेस ऑफ द अर्थ' 1904 में हुआ था। इन पुस्तकों में भारत से लाए गए जीवाश्मों का भी वर्णन है। टेथीयन समूह की शैलों का निर्माण भारत के उत्तर में हुआ था। यह शैलें अवसादी प्रकृति की थीं और इनकी कुल मोटाई 15-20 किलोमीटर के मध्य में आंकी गयी है। टेथीस सागर की अवधारणा को उलीज (1911), डायनेर (1925) और डागे

(1926) ने समर्थन देते हुए बताया कि यह दो महाद्वीपों (गोन्डवानालैंड और लारेशिया) के मध्य था न कि पेन्जिया के ऊपर। टेथीस के पहले रहेइक सागर 54 करोड़ वर्ष पूर्व से 30-35 करोड़ वर्ष पूर्व था। इसके पूर्व आयपेट्स 60-50 करोड़ वर्ष पूर्व में था। ये सागर अलग-अलग जगह पर स्थित था।

अन्य विज्ञान की शाखाओं की भांति भू विज्ञान में भी कई विषय विवाद के कारण रहे है। इसके एक समूह का विचार था कि पृथ्वी के निमार्ण से अभी तक जो चीज जहाँ है, वहीं पर शुरू से रही है। इन्हें फिक्सिस्ट या स्थायित्ववादी की संज्ञा दी गई और इसके विपरित दूसरी विचारधारा थी कि पृथ्वी के बड़े-बड़े भूखण्डों में स्थान परिवर्तन होता है। इन्हें मोबीलिस्ट या गतिवादी कहते हैं। इनमें से एक समूह टेथीज का जिओसिन्क्लाइन या भूसन्नती मानता था और दूसरा एक सामान्य सागर।

धीरे-धीरे टेथीस की अवधारणा में परिवर्तन आने शुरू हुए क्योंकि नए-नए तथ्य भूविज्ञान में उभर रहे थे। जो इसे जिओसिंक्लाइन यानी एक बड़ा लम्बा और उथला गर्त या गड्डा जो कि दो महाद्वीपों के मध्य में होता था और उसमें अवसाद जमा होने के पश्चात विशालकाय पर्वत माला उत्पन्न होकर उपर आती थी, उनके अनुसार कुछ लोगों ने इसे एक गर्त माना और कुछ लोगों ने गर्तों का समूह। जो गतिवादी समूह था उसके प्रारम्भिक आंकलन के अनुसार यह पेंजिया के पूर्वीभाग एक त्रिकोणीय आकृति वाला समुद्र गोन्डवानालैंड और लारेशिया के मध्य था परन्तु यह स्वेस की कल्पना से अधिक पुराना इतिहास समेटे हुआ था।

सन 1950-1970 का समय भूविज्ञान में क्रांति का काल था, पुरानी अवधारणाएं एक-एक करके धराशायी हो रही थीं और नित नयी जानकारियाँ विज्ञान पत्रिकाओं में प्रकाशित हो रही थीं। इनमें एक थी पुरा चुम्बकत्व द्वारा किसी भी भूखण्ड की किसी भी काल की शैल का देशान्तर या लेटीट्यूड का पता लगाना। वैज्ञानिकों ने पाया पृथ्वी पर पाये जाने वाले भूखण्ड अथवा महाद्वीप कभी भी स्थायी नहीं रहे हैं और वे लगातार एक-एक कर अपनी स्थिति परिवर्तित करते रहे हैं। इसी के आधार पर महाद्वीपों का भ्रमण इतिहास संकलित होने लगा। इसके साथ ही यह भी पता चला कि समुद्र की तलहटी की शैलों की आयु महाद्वीपों में पायी जाने वाली शैलों की अपेक्षा बहुत अल्प आयु (20 करोड़ वर्ष से भी कम) की है। इन शैलों का निमार्ण सतत रूप से समुद्र के अन्दर उपस्थित पहाड़ों के मध्य से हो रहा है। जैसे ही शैलें समुद्र की तलहटी पर उभर कर आती है वे उस वक्त का पृथ्वी का चुम्बकत्व ग्रहण अथवा आत्मसात कर लेती है। पृथ्वी के चुम्बक का उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव लगातार अपनी स्थिति बदलते रहते हैं। उत्तरी ध्रुव, दक्षिणी ध्रुव हो जाता है और दक्षिणी उत्तरी ध्रुव। इस खोज का नतीजा यह हुआ कि जिस महाद्वीपीय विस्थापन के सिद्धान्त की खिल्लियां उड़ाई जाती थीं। अब रिवानिलया समूल नष्ट होकर विस्थापन को स्वीकार किया जाने लगा, थोड़े परिवर्तन के साथ महाद्वीपीय विस्थापन अब प्लेट टेक्टानिक्स हो गया।

इन खोजों का एक नतीजा यह निकला कि जो पेंजिया एक मात्र विशाल महाद्वीप हुआ करता था, ऐसा नहीं था कई भूखण्ड द्वीपों के रूप में अलग-अलग जगहों में स्थित रहे और बहुत से टूटकर अलग हो गये। पेंथालासा महासागर के अलावा भी अन्य छोटे-बड़े समुद्रों के बारे में जानकारियाँ आने लगीं। इसी तरह टेथीस, सिनोटेथीस एवं पेराटेथीस हो गया। कुछ भू-वैज्ञानिक अरल सागर, काला सागर, केस्पियन सागर को पेराटेथीस या मूल टेथीस का अवशेष मानते हैं। उस वक्त के टेथीस का कुछ हिस्सा आज के अंध महासागर का भाग बना चुका है। इसीलिए पेलियो, मिसो और निओटेथीस की अवधारणा उत्पन्न हुई और इसका कारण गोंडवानालैंड या लारेशिया के लम्बवत टूटने से एक पतली परन्तु लम्बी पट्टी का बनना और मूल स्थल तथा पट्टी के मध्य एक नए समुद्र का बनना। सबसे पहले पेलियो टेथीस बना और अंत में निओटेथीस। पेलिओटेथीस के भी पूर्व प्रोटोटेथीस था जो अपनी वास्तविक आकृति में 60 से लेकर 36 करोड़ वर्ष पूर्व था। पेलिओटेथीस से केलेडोनियन, मिसोटेथीस से वारिजकान या हर्षिनियन और निओटेथीस से अल्पलाइन - हिमालयन जैसी विशाल पर्वतमालाएं उत्पन्न हुई। निओटेथीस के विलुप्तिकरण की प्रक्रिया कई करोड़ वर्ष में सम्पन्न हुई। इसकी शुरूआत करीब 5.5 करोड़ वर्ष पूर्व हुई और आज से चार करोड़ वर्ष पूर्व पूर्ण हुई। अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग समय पर टेथीस विलुप्त हुआ। म्यांमार (बर्मा) में तो यह बहुत बाद में (2 करोड़ वर्ष पूर्व) विलुप्त हुआ था।

भारत में टेथीस सागर से उत्पन्न हुई शैलें कश्मीर, हिमाचल, उत्तराखण्ड, नेपाल, भूटान और अरूणाचल में मिलती हैं, इनके अलावा पाकिस्तान, काराकोरम और तिब्बत में भी मिलती है। टेथीस एक समय में सात हजार किलोमीटर लम्बा सागर था और पूरे सागर के किनारों पर अवसाद जमा होता रहा होगा। हिमालय के उत्थान के लिए भारी पैमाने पर पृथ्वी के अन्दर हलचलें हुई। शैलें टूटी, मुड़ी, विस्थापित हुई, पहाड़ और घाटियाँ बनी। जो एक सतत सागर में शैलें जमा हुई थीं, अब वे प्रादेशिक स्तर पर छिन्न-भिन्न होने लगी। टेथीस सागर की शैलें हिमालय में 30-40 किलोमीटर चौड़ी पट्टी में पायी जाती है और डॉ. एस के परचा के अनुसार इनका क्षेत्रफल लगभग एक लाख बीस हजार वर्ग किलोमीटर है। टेथीस की शैलें उच्च हिमालय की शैलों की तलहटी पर जमा हुई थी जो काफी पुरानी है। उच्च हिमालय की शैलों द्वारा निर्मित टेथीस

सागर का तल हमेशा एक जैसा नहीं रहा। यह उपर-नीचे होता रहता था उसके कारण अलग-अलग जगह पर भारत में ही अलग-अलग समय में शैलों का बनना शुरू हुआ यथा कश्मीर में 52 करोड़ वर्ष पूर्व, हिमाचल के स्पीटी में 60 करोड़ वर्ष पूर्व, झंस्कार में 65 करोड़ वर्ष पूर्व, भूटान के चेरवा क्षेत्र में टेथीस सागर की सबसे पुरानी शैलों की आयु का अनुमान 60-70 करोड़ वर्ष का लगाया गया है। अरूणाचल प्रदेश के बारे में टेथीस व समुद्र की शैलों के बारे में अति दुर्गम क्षेत्र होने के कारण बहुत ही अल्प जानकारी है। यामने क्षेत्र में 30 से 25 करोड़ वर्ष पूर्व की शैलें मिलती हैं। गढ़वाल-कुमांऊ में टेथीस के सबसे नीचे तल की शैलें कुमायू के मारतोली क्षेत्र में पायी जाती हैं, जो प्रारम्भिक प्रोटेरोझोइक काल अर्थात 250 करोड़ से 160 करोड़ वर्ष के मध्य की हैं इन अति प्राचीन शैलों के उपरी प्रोटेरोझोइक काल की समाप्ति (100 करोड़ से 60 करोड़ वर्ष के अन्तराल) रालम समूह की शैलें मिलती हैं। दोनों (मारतोली एवं रालम समूह की शैलों) के मध्य 70-80 करोड़ वर्ष का अन्तर होना चाहिए। नेपाल, सिक्कम, भूटान और अरूणाचल में टेथीस समुद्र की शैलों का विकास मुख्य रूप से इनके उत्तर तिब्बत में हुआ है और अत्यंत दुर्गम क्षेत्र होने के कारण इसकी भू वैज्ञानिक जानकारी का भी अभाव है। एवरेस्ट पर्वत 35 करोड़ से 25 करोड़ वर्ष पूर्व के चूनापत्थर से निर्मित है। हिन्दू घरों में शालीग्राम (भगवान विष्णु का चक्र) नामक पत्थर की पूजा होती है, शालीग्राम समूह की शैलों का निर्माण 20 से 14 करोड़ वर्ष के मध्य में हुआ था।

उपरोक्त क्षेत्रवार विश्लेषण से पता चलता है कि टेथीस सागर ने अपने अस्तित्व में आने को बहुत समय लिया था, कहीं पर यह जल्दी आ गया और कहीं पर काफी समय पश्चात, भूविज्ञान की अधिकांश गतिविधियां इसी प्रकार सम्पन्न होती हैं। टेथीस ने इसी प्रकार अपनी आयु भी अलग-अलग जगह पर अलग-अलग समय में पूर्ण करी थी। आयु की पूर्णता का पता क्षेत्र में पाये जाने वाले सबसे नवीनतम जीवाश्म की आयु से पता चलता है। अधिकांश क्षेत्रों में टेथियन समुद्र का पानी बहकर क्रिटेशियस यानि 14.5 करोड़ वर्ष से 6.6 करोड़ वर्ष पूर्व टेथीस सागर करीब-करीब लुप्त हो गया था। परन्तु झंस्कार (कश्मीर) में 3.8 करोड़ वर्ष पूर्व और उत्तराखण्ड के मल्ला जोहार क्षेत्र में 4.0 करोड़ वर्ष पूर्व टेथीस सागर लुप्त हुआ था। टेथीस सागर की जीवन अवधि भारतीय प्रमाणों के अनुसार 60 करोड़ वर्ष से लेकर 3.8 करोड़ वर्ष पूर्व की थी। टेथीस सागर की 56-57 करोड़ वर्ष की जीवन यात्रा एक जैसी नहीं रही थी। इसके जीवन काल में उतार-चढ़ाव कई बार आये हैं। ऐसा भी समय आया जब कई लाखों वर्षों तक समुद्र कोई जमाव नहीं हुआ। लम्बे समय तक नदियों के मलवे अथवा अवसाद का जमा न होने कारण जलवायु परिवर्तन, नदियों द्वारा मार्ग बदल लेना नदियों के पानी का अत्यंत कम होना या समुद्र का दूर खिसक जाना संभावित कारण हो सकते हैं। हर क्षेत्र में ऐसी स्थिति 5-6 बार देखी गयी है। भूवैज्ञानिक अवसाद के जमा न होने की स्थिति को विषम विन्यास या अनकन्फर्मिटी कहते हैं।

जिसे भारतीय परिपेक्ष में टेथीस सागर कहा गया है, वह टेथीस सागर के वर्गीकरण के अनुसार निओटेथीस सागर है। इसकी अवधि 25 से 5 करोड़ वर्ष के मध्य की थी। हमारे उत्तराखण्ड में 250 करोड़ से 160 करोड़ वर्ष की शैलें मारटोली में मिलती है। इसका तात्पर्य यह हुआ मारटोली क्षेत्र की प्राचीनतम शैलें किसी अन्य समुद्र में जमा हुई होगी। कालान्तर में वह समुद्र लुप्त हो गया होगा और एक बार फिर नया समुद्र इस क्षेत्र आया होगा जिसमें बाद की शैलों के लिए अवसाद का अवक्षेपण शुरू हुआ। इसको मानने के अलावा हमारे पास कोई अन्य विकल्प नहीं है। बात यही पर समाप्त नहीं होती है। अब जरा टेथीस की जीवन अवधि और इस क्षेत्र में पायी जानी शैलों की जीवन अवधि पर गौर करें। अगर हम भारतीय क्षेत्रों में पायी जाने वाली शैलों का निक्षेपण निओटेथीस में मानें तो निओटेथीस का जीवनकाल 25 करोड़ से 5 करोड़ वर्ष का था, अगर प्रोटोटेथीस में माने तो उसकी अवधि 55 करोड़ से 33 करोड़ वर्ष की थी, जबकि हमारी प्राचीनतम टेथीस की शैलें 60 करोड़ वर्ष पुरानी है। अर्थात हमारी शैलें टेथीस के अस्तित्व में आने के पूर्व की हैं। अगर 60 करोड़ वर्ष पूर्व के काल में चलें तो उस वक्त आयपेट्स सागर (60 करोड़ से 40 करोड़ सागर था) और उसके पहले मिरोविया सागर था। इसका तात्पर्य तो यह हुआ कि जिसे हम टेथीस सागर की शैलें कहते हैं वह एक सागर नहीं बल्कि कई सागरों यथा रहेइक, आयपेट्स और मिरोविया में निक्षेपित हुआ। सबसे अंत में टेथीस बार-बार सागर के भूगोल बदलने का कारण यह भी हो सकता है कि उच्च हिमालय की तलहटी पर जो शैलों का जमाव हो रहा था, वह पेसिव फ्लोर अर्थात एक निष्क्रिय तलहटी थी और भारत का उत्तरी भाग एक जगह से दूसरी जगह लगातार भ्रमण कर रहा था। भ्रमण चक्र में रूकावट आने पर बीच-बीच में शैलों का जमा होना रूक गया होगा। इस पर अभी शोध होना बाकी है।

यह है भारतीय क्षेत्र के टेथीस महासागर की कहानी। उत्तराखण्ड टेथीस के इतिहास में इसलिए विशिष्ट स्थान रखता है, कि यहाँ पर अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा काफी लम्बे समय तक शैलों का बनना चलता रहा। ऐसी लम्बी जमा अवधि वाले क्षेत्र दुनिया में दुलर्भ हैं।

नैनीताल की वनस्पतियां और उनका संरक्षण

बी.एस.कालाकोटी

नैनीताल जिला उत्तराखंड के कुमांऊ भू-भाग के अंतर्गत आता है। जिले का क्षेत्रफल 4251 वर्ग किलोमीटर है। यह जिला भूमध्यसागर से लगभग 80 डिग्री 14 मिनट अक्षांश और 29 डिग्री देशान्तर के मध्य आता है। नैनीताल जिले के पूर्व में जिला चंपावत, पश्चिम में पौड़ी गढ़वाल, उत्तर में अल्मोड़ा तथा दक्षिण में उधमसिंह नगर पड़ता है। उत्तरी भाग में हिमालयी तथा दक्षिण में मैदानी भाग आता है। जिले की समुद्र तल से ऊँचाई 300 मीटर मैदानी क्षेत्र से लेकर 2623 मीटर ऊंचाई तक है, अर्थात वनस्पति की दृष्टि से विविधताओं से ओत-प्रोत है। जलवायु विविधता से ही जैव विविधता विकसित होती है। नैनीताल जिले को वनस्पतियों तथा ऊंचाई के मध्य नजर रखते हुए उत्तर की तरफ मध्य हिमालई क्षेत्र तथा दक्षिण में तराई की सीमा है। एक तरफ़ जलवायु उपोष्ण क्षेत्र है तथा ऊपर को गर्म शीतोष्ण तथा शीत शीतोष्ण जलवायु वाला क्षेत्र है। भूगोल की भाषा में जिले की वनस्पतियों को दो भागों में बांटा गया है पहला पहाड़ी भाग और दूसरा बाहरी हिमालय क्षेत्र कहा जाता है। इस पहाड़ी भू-भाग में बहुत सारे झीलें हैं इसलिए नैनीताल को झीलों का शहर भी कहा जाता है।

मैदानी भाग को भाबर कहा जाता है। भाबर का मतलब है लंबी उगने वाली घास तथा सघन जंगल का क्षेत्र। जमीन के अंदर पानी काफी गहराई में होता है। इसमें कोशी नदी मुख्य है। कोशी मूल कौसानी के नजदीक से होते हुए पश्चिमी भाग में रामनगर की तरफ बहती है। छोटी-छोटी नदियां जैसे गोला, भाखड़ा, दाबका, बोर इस जिले में पाई जाती हैं। जिले में वार्षिक वर्षा औसतन 1602.69 मिलीमीटर मापी गई है।

पौराणिक कथाओं में नैनीताल

पुराणों में नैनीताल को त्रि-ऋषि सरोवर कहा जाता है। ऋषि पुलाहा, ऋषि पुलस्त्य और ऋषि अत्रि, अपनी यात्रा के समय यहां पहुंचे और अपनी प्यास तृप्त करने के लिए त्रि ऋषियों ने एक गड्ढा खोदा जिसमें उन्होंने पवित्र मानसरोवर के पानी की कल्पना की और इसमें पानी भर आया।

सन 1839 में एक अंग्रेज जिसका नाम पी बैरन था, वह अपने कुछ दोस्तों के साथ हिमालय पहुंचा उसको सुंदर झीलें तथा यहां की सुंदरता बहुत पसंद आई। बैरन ने झील के चारों तरफ यूरोपीयन कॉलोनी बनाई इसके पश्चात कोलकाता में नैनीताल झील के बारे में छापा। यहां का खानपान गेहूं, चावल, मंडवा, दाल मसूर, भट्ट, गहत, उड़द प्रमुख है। त्योहारों में खटाई, रायता, पूड़ी, कापा, सिंगल और खीर आमतौर पर खाई जाती है। पहाड़ के विशेष व्यंजन गाबा, झोली, चुरकानी काफी मशहूर हैं।

नैनीताल जिले को निम्न हिमालयी, शिवालिक पहाड़ियों और मैदानी भागों में बांटा गया है। यहां की जलवायु ऊंचाई के हिसाब से बदलती है। यहां मिट्टी भी ऊंचाई के हिसाब से अलग-अलग है। यहां काली नमी वाली मिट्टी से लेकर रेतीली तथा चट्टानी जमीन है। नैनीताल जिले में लगभग तीन प्रकार के मौसम पाए जाते हैं-

ठंड का मौसम	**अक्टूबर-मार्च**
गर्मी का मौसम	**अप्रैल-जून**
बरसात का मौसम	**जून-सितंबर**

यहां का तापमान 0 से 35 डिग्री सेंटीग्रेड तक जाता है। मैदानी भागों में 1 डिग्री से 35 डिग्री या कभी-कभी 40 डिग्री सेंटीग्रेड भी जाता है।

वनस्पतियों का इतिहास

वनस्पतियों के वर्णन करने का श्रेय यूरोप के वनस्पति शास्त्री, मिलिट्री ऑफिसर, सर्जन और सर्वे अधिकारियों को जाता है। नैनीताल जिले के वनस्पतियों का सर्वेक्षण का इतिहास तीन कालों में बांटा जा सकता है।

1. 1906 तक का काल
2. 1907 से 1960 तक
3. 1961 से आज तक

1906 तक का काल -

थॉमस हार्डविक पहला यूरोपियन था जिसने उत्तर भारत के पहाड़ों में वनस्पतियों का सर्वे किया। उसके बाद रिचार्ज ब्लिंगवर्थ ने 1815 से 1820 अपने साथियों के साथ वनस्पतियों का सर्वे किया जिसमें कुमांऊ का वर्णन है। सबसे बड़ा सर्वे वनस्पतियों का रिचर्ड स्ट्रैची तथा जे.एफ विंटरबॉटम ने 1846 से 1849 तक किया, जिसमें

नैनीताल का भी वर्णन है। यहां की वनस्पतियों को हारबेरियम के रूप में ब्रिटिश म्यूजियम में रखा गया। 1906 मैं स्ट्रैची और विंटरबॉटम का एक कैटलॉग छप कर आया जिसमें नैनीताल के पौधों का विवरण है-

1907-1960 तक

वन अनुसंधान संस्थान देहरादून की स्थापना के बाद सन 1927 में ए.ई. ओस्मास्टोन द्वारा कुमांऊ के पेड़ों के बारे में पुस्तक निकाली गई। छोटी वनस्पतियों से लेकर वृक्षों तक का आंकलन पूरे कुमांयू का आज भी उपलब्ध नहीं है। बीच-बीच में कुछ वैज्ञानिकों ने भी काम किया था।

1961 वर्तमान तक

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण विभाग की देहरादून शाखा की स्थापना 1956 के बाद उत्तरी हिमालय का सर्वे का काम शुरू किया गया जिसमें बहुत सारे शोध लेख छापे गए लेकिन पूर्ण वनस्पति सर्वेक्षण अभी भी बाकी है। लेखक ने यह काम कई सालों पहले शुरू किया तथा 2022 में नैनीताल जिले के संपूर्ण वनस्पतियों को एक पुस्तक 'फ्लोरा ऑफ़ नैनीताल डिस्ट्रिक्ट' के रूप में प्रकाशित किया है।

नैनीताल जिले की वनस्पतियां

लेखक ने नैनीताल जिले की 1720 प्रजातियों के पौधों का वर्णन करीब करीब 10 सालों के सर्वे के बाद किया है जिनकी संख्या गोंद एवं रेजिन वाले पौधों की सारणी में दी गई है।

1906 में प्रकाशित स्ट्रैची एवं विंटरबॉटम की सूची के सापेक्ष आज की जलवायु में काफी अंतर आया है। यह इस बात से सिद्ध है कि नैनीताल जिले में 36 पौधों की प्रजातियां विलुप्त हो गई है या ऊपरी हिमालय की ओर पलायन कर गई है। यह ग्लोबल वार्मिंग का एक कारण है। इसके अतिरिक्त 162 प्रजातियां विलुप्त होने की कगार पर हैं, जिनका संरक्षण करना अति आवश्यक है। यह हमारे पर्यावरण के लिए भी आवश्यक है। इन वनस्पतियों का विलुप्त होने तथा संख्या में कमी आने के बहुत से कारण हैं, जिनमें से मुख्य कारण निम्न प्रतीत होते हैं-

1. जलवायु परिवर्तन
2. जंगलों में आग लगना
3. वृक्षों की बेमतलब कटाई-छंटाई
4. जानवरों द्वारा आवश्यकता से ज्यादा नुकसान
5. अतिक्रमण
6. भूमि कटाव
7. बंजर भूमि में कृषिकरण
8. शहरीकरण
9. तूफान
10. जंगली जानवर तथा कीट पतंगों से नुकसान

उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए पौधों का संरक्षण करना हमारे वातावरण के लिए बहुत आवश्यक है। नैनीताल जिले में पाए जाने वाले पौधों का निम्नलिखित उपयोगिताओं के हिसाब से वर्गीकरण लेखक ने किया है।

स॰	पौधे	कुल
1	औषधीय पौधे	550
2	धार्मिक उपयोगी	22
3	गोंद देने वाले पौधे	11
4	फाइबर वाले पौधे	20
5	मसाले वाले पौधे	16
6	प्राकृतिक खाने वाले रंग	10
7	कपड़े रंगाई वाले पौधे	13
8	सुगंधित व तैलीय पौधे	24
9	चारे के उपयोगी पौधे	79
10	अन्य	975
	कुल योग	**1720**

उपरोक्त 550 औषधीय पौधों में से 270 पौधों के हजारों टन की दवाई कंपनियों में आवश्यकता होती है। इनका कृषिकरण करके उत्तराखंड को उन्नत सप्लाई का प्रदेश बनाया जा सकता है।

गोंद एवं रेसिन वाले पौधे

वनस्पति	(1720)	कुल प्रतिशत	वंश	प्रतिशत	प्रजाति	प्रतिशत
द्विबीजपत्री	131	82.92%	711	78%	1318	77%
एक बीज पत्री	27	17.08%	200	22%	402	23%
कुल योग	158	100%	911	100%	1720	100%

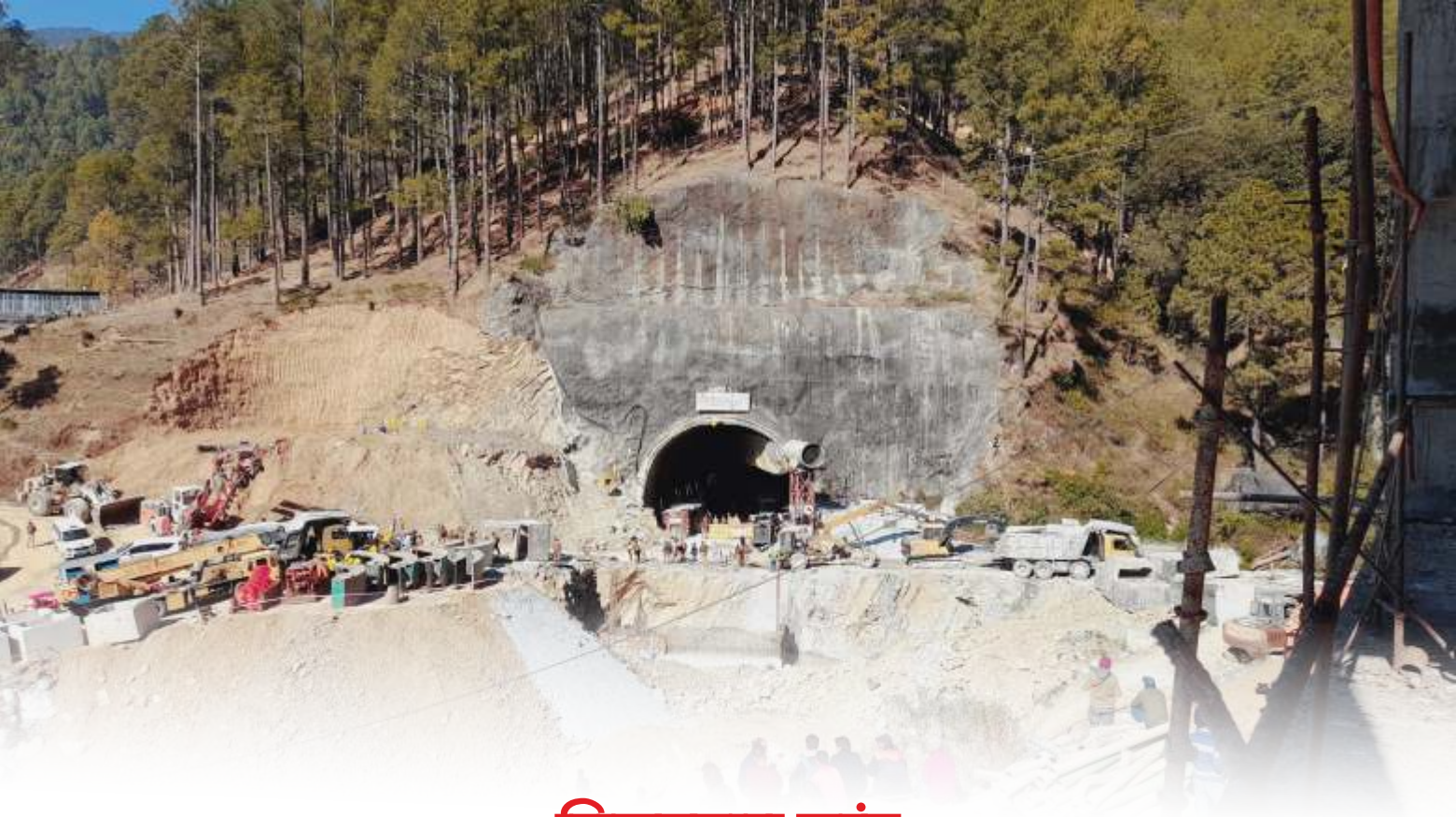

सिलक्यारा सुरंग

जिसने देश की सांसें रोक दी थीं

भारत सरकार की महत्वाकांक्षी 889 किलोमीटर लम्बी चार धाम परियोजना, जिसमें उत्तराखण्ड के चारों धामों बद्रीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री एवं यमुनोत्री तक आवागमन सुगम करने और तीव्र गति प्रदान करने के लिए सड़कों के चौड़ीकरण का अभियान सन 2016 से शुरू हुआ था। इस अभियान में प्रस्तावित सड़कों की चौड़ाई 10 मीटर की है, तथा लम्बाई को कम करने के लिए घुमावदार पहाड़ी रास्तों पर सुरंगों का निर्माण भी होना प्रस्तावित था। ऐसे ही एक भाग बड़कोट-धरासू, जिला उत्तरकाशी में राष्ट्रीय राजमार्ग 134 पर, सिलक्यारा मोड़ के नजदीक 4531 मीटर लम्बी सुरंग का निर्माण, 25 किलोमीटर की यात्रा को मात्र 4.5 किमी में समेटने के प्रस्ताव पर कार्य चल रहा था। यह 2 लेन सुरंग 1120 करोड़ की लागत से तैयार होने वाली थी।

एकाएक 12 नवम्बर, 2023 के दिन जब सारा देश दीवाली की रात्रि की तैयारी कर रहा था, तब इलैक्ट्रॉनिक मीडिया में प्रमुखता से प्रचारित होने लगा, कि आज प्रातः सिलक्यारा टनल के निर्माण में लगे हुए 41 श्रमिक धंसाव के कारण टनल में फंस कर जिन्दगी और मौत से जूझ रहे हैं और उन्हें बाहर निकालने के लिए बचाव कार्य शुरू होने जा रहा है। आखिरकार कई तरह के प्रयासों के पश्चात् 28 नवम्बर, 2023 के दिन 41 श्रमिकों को नया जीवन मिला।

इस साढ़े चार किमी की लम्बाई वाली टनल के पूरे होने में मात्र 450 मीटर की खुदाई बाकी थी। सिलक्यारा की ओर से 2.5 किलोमीटर से अधिक की खुदाई हो चुकी है और सुरंग के मुहाने से 200 मीटर अन्दर करीब 60 मीटर लम्बे क्षेत्र में मलबा आ गया था। इस मलबे ने आने-जाने का रास्ता पूर्ण रूप से अवरोधित कर दिया था।

सामान्य तौर पर जब कोई बड़ा निर्माण होता है तो उसके शिलान्यास और उद्घाटन की ही खबरें मीडिया में आती है, परन्तु जब निर्माण के दौरान हादसा होता है तो हर पहलू की बारीकी से छानबीन होने लगती है। जानकारी निकल कर आने लगी कि पहले भी निर्माण के दौरान 19 बार सुरंग का मलबा गिरा था और जिस जगह 12 नवम्बर को मलबा आया था, उसी स्थल पर 2019 में भी हादसा हुआ था।

बार-बार मलबे के गिरने का कारण क्या था ? आदर्श रूप से निर्माण प्रक्रिया शुरू करने के पहले विस्तार में कई विधियों द्वारा क्षेत्र के बारे में भूवैज्ञानिक जानकारी जुटाई जाती है। यह प्रक्रिया बड़ी खर्चीली और श्रम साध्य होती है। हर पहलू का सर्वेक्षण कर विस्तार में डिटेल प्रोजेक्ट रिर्पोट बनाई जाती है और उसका आंकलन एक अलग प्राधिकरण द्वारा करे जाने और प्राधिकरण के संतुष्ट होने पर

निर्माण की अनुमति दी जाती है। सामान्यतौर पर डिटेल प्रोजेक्ट रिपोर्ट में कहाँ पर क्या संभावित परेशानी या अड़चन आ सकती है, इसका विवरण रहता है और प्लानिंग के दौरान क्या संभावित समाधान हो सकता है। उसीके अनुसार कार्य करा जाता है। सारी सावधानियां बरतने के पश्चात भी निर्माण कार्यों में हादसे होते हैं क्योंकि पृथ्वी के आंतरिक व्यवहार में परिवर्तन होने अथवा पुनः संतुलन स्थापित करने के लिए चट्टानें टूट-टूट कर गिरने लगती हैं।

अगर कहीं भूवैज्ञानिक कमजोरी यथा भ्रंश/फॉल्ट हो, तो वहाँ पर चट्टानों के टूटने की संभावना बहुत अधिक रहती है। फाल्ट में पृथ्वी के आंतरिक बल के कारण चट्टानें टूट कर ऊपर-नीचे अथवा आगे-पीछे खिसक जाती हैं और अगर बार-बार उसी स्थल पर फॉल्ट की प्रक्रिया होती है तो कमजोर क्षेत्र यानी टूटी चट्टानों का क्षेत्र धीरे-धीरे अधिक चौड़ा होता जाता है। इस कारण चट्टानों की बल अवरोधन की क्षमता कम हो जाती है। हर जगह एक जैसी समस्या नहीं होती है। विभिन्न भूवैज्ञानिक कारणों से अलग-अलग जगह, अलग-अलग प्रकार के हादसे होते रहते हैं। आवश्यकता होती है हादसों से सचेत रहें और पूर्व आंकलन और नवीन आंकलन जो खुदाई के दौरान होता है उनमें सामंजस्य बना कर कमजोर क्षेत्रों का भूवैज्ञानिक उपचार करें यथा दीवार बनाएं, स्टील के बोल्ट या प्लेट लगाएं या बहुत ही अधिक भयावह स्थिति हो तो उस क्षेत्र को छोड़ कर नए विकल्प ढूंढे। संभावित हादसों से बचने के लिए सुरंग के अन्दर इस्केप प्लान या बचाव का रास्ता भी बनाया जाता है।

सिलक्यारा में वैसे तो चट्टानें मजबूत क्षमता वाली थीं परन्तु उनके मध्य कम क्षमता वाली चट्टानों की पट्टियां भी थीं और साथ एक भ्रंश/ फॉल्ट भी था। जब खुदाई चलती है तो चारों तरफ के दबाव से चट्टानों में असंतुलन उत्पन्न हो जाता है और पुनः पृथ्वी संतुलन की अवस्था में आने के लिए स्वयं अपनी ओर से प्रयास करती है। पृथ्वी के प्रयास का आंकलन आधुनिक उपकरणों से पता किया जा सकता है। हम यह भी कर सकते हैं कि पृथ्वी की क्षमता से अधिक क्षमता वाला अवरोध उस स्थल पर खड़ा कर दे जहाँ पर मलबा निकलने की संभावना है। सिलक्यारा में यही हुआ कि निर्माण कंपनी द्वारा निर्मित करा गया अवरोध पृथ्वी की क्षमता से कम था और नतीजा यह निकला की वहाँ पर धंसाव हो गया। धंसाव होने के पश्चात एक-एक करके निर्माण के दौरान और निर्माण के पूर्व क्या खामियां रहीं, निकल कर सामने आने लगीं। यह कहा जाने लगा कि टनल का अलाईमेंट (दिशा) ही गलत था, भू वैज्ञानिक विश्लेषण सही नहीं हुआ, बचाव का कोई प्लान नहीं था। निर्माण सामग्री की गुणवत्ता अच्छी नहीं थी, बीच-बीच में जो मलवा गिरने की घटना हुई उन्हें नजर अंदाज करा गया। पूर्व संकेतों और सूचकों पर ध्यान नहीं दिया गया इत्यादि।

इसी प्रकार बचाव अभियान भी 'हिट एंड ट्रायल' अथवा तीर तुक्के जैसा चला। शुरू में जेसीबी मशीन से मलबा हटाने की कोशिश हुई। फिर ह्यूम पाईप के द्वारा श्रमिकों को निकालने का प्रस्ताव आया। उसके बाद दो बार 1400 हर्स पावर की ऑगर ड्रिलिंग मशीनों से बोरिंग पर कार्य हुआ- उर्ध्वाधर एवं क्षितिज ड्रिलिंग, दूसरे मुहाने से खुदाई, सिलक्यारा मुहाने से बचाव रास्ता बनाने और अंत में 'रेट माइनर्स एवं विदेशी विशेषज्ञ अर्नोल्ड डिक्स व भारतीय विशेषज्ञों द्वारा बचाव अभियान सफलता पूर्वक सम्पन्न किया गया।

भारत सरकार और उत्तराखण्ड सरकार ने अपने-अपने स्तर पर जाँच-पड़ताल कमेटियों का गठन किया। अब यह देखना है कि अगर लापरवाही है तो किस पर कार्यवाही होती है। फिलहान टनल का कार्य तीन माह पश्चात पुनः शुरू हो गया है। हादसे अत्यंत मजबूत चट्टानों में भी होते हैं। हिमालय को कमजोर भूगर्भीय स्थिति का क्षेत्र मानकर विकास का कार्य रोका नहीं जा सकता है। आवश्यकता है सही भूगर्भीय विश्लेषण के पश्चात निर्माण में समुचित सावधानियों को अपनाने की।

-विज्ञान परिचर्चा डेस्क

सिलक्यारा टनल हादसा: एक विशेषज्ञ का आंकलन

डॉ0 पी0सी0 नवानी एक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त इंजीनियरिंग भूवेत्ता हैं। डॉ0 नवानी के भूवैज्ञानिक निर्देशन में ही इंजीनियरिंग का मार्वल (अभियांत्रिकी का चमत्कार) भारत के सबसे ऊँचे टिहरी बांध का निर्माण हुआ, जो कि देश की प्रगति में मील का पत्थर सिद्ध हो रहा है। डी0बी0एस0 कॉलेज, देहरादून से स्नातक एवं स्नातकोत्तर शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण में कनिष्ठ भूवेत्ता से लेकर उपमहानिदेशक तक के सफर के पश्चात् डॉ0 नवानी विश्व प्रसिद्ध नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ रॉक मैकेनिक्स में निदेशक बने। बांधों के बारे में आखिरी सलाह डॉ0 नवानी की ही होती है। सेवा निवृत्ति के पश्चात् डॉ0 नवानी सक्रिय भू अभियांत्रिकी के सलाहकार के तौर पर सरकारी और गैरसरकारी संस्थाओं को अपनी सेवाएं दे रहे हैं। विज्ञान परिचर्चा की ओर से **सोनाली कठैत** द्वारा उनसे दूरभाष पर की गई बातचीत का सारांश प्रस्तुत है-

12 नवम्बर को, भारत के उत्तराखण्ड के उत्तरकाशी जिले में राष्ट्रीय राजमार्ग 134 को जोड़ने हेतु निर्मित सिलक्यारा-बड़कोट सुरंग का एक भाग निर्माणाधीन होने के दौरान धंस गया, इसके पीछे क्या कारण था ?

इसके पीछे सबसे बड़ी और मुख्य वजह थी, लापरवाही। यह लगभग 4.5 किमी लंबी सुरंग थी, हम जान गये थे कि यह कमजोर शीयर वाला क्षेत्र है, क्योंकि भूवैज्ञानिक आंकलन पहले ही किया जा चुका था।

जहां भी अपरूपण तनाव वाले ये कमजोर क्षेत्र होते हैं, उस जगह का स्थिरीकरण करने के लिए एक सहायता प्रणाली प्रदान करने की आवश्यकता होती है। यह प्रक्रिया यहीं पर खत्म नहीं होती। इन उपकरणों को स्थापित करने के बाद, इनकी निगरानी करना भी महत्वपूर्ण होता है, जिसके लिए यह उपकरण लगाए जाते हैं। यह उपकरण सिग्नल प्राप्त करके हमें सचेत करते हैं, किसी भी चिंताजनक स्थिति के बारे में। यह उपकरण किसी खास एक्शन की मांग करते हैं, किसी भी अचानक आने वाली समस्या का समाधान करने के लिए। लेकिन अगर हम ऐसी समर्थन प्रणालियों को बिना किसी निगरानी के यूं ही लगा कर बस छोड़ दें, तो ऐसी संभावना भी उत्पन्न हो सकती है कि हमें अपेक्षित समर्थन पर्याप्त न हो।

इन स्थितियों में फिर अपर्याप्तता के कारण निरंतर विसंगतियाँ होती रहती हैं और फिर एक समय के बाद वह ढांचा ढह जाता है। सिलक्यारा के मामले में उत्पादकता बढ़ाने के लिए वहां काम करने वाले लोग आगे बढ़ते रहे और परिणामों के बारे में नहीं सोचा, और फिर एक ऐसी स्थिति आई जहां सहायता प्रणाली असंतुलित हो गईं, और वो टनल ढह गयी। भूमिगत कार्य आमतौर पर सुरक्षित होते हैं, लेकिन अगर इनमें लापरवाही हो तो यह समस्याग्रस्त हो जाते है। रॉक मास (चट्टानों का समूह) पर सभी भूवैज्ञानिक जांच, इंजीनियरिंग भूवैज्ञानिकों द्वारा आवश्यक उत्खनन के तरीकों के अनुसार आर. एम. आर. (रॉक मास रेटिंग) और अन्य तरीकों के माध्यम से की जाती है। इसके माध्यम से प्राप्त निष्कर्ष का उपयोग किसी संरचना को दी गई सहायता प्रणाली के प्रकारों को वर्गीकृत करने के लिए किया जाता है। इसलिए यदि कोई भू विज्ञानी कहता है कि निश्चित क्षेत्र एक कमजोर क्षेत्र है, तो हर चीज को उसी के अनुसार डिजाइन करने की आवश्यकता होती है और फिर सहायता प्रणालियों की दक्षता की समय-समय पर जांच करने के लिए निगरानी की जाती है। सुरंग ढहने का एक कारण निगरानी न करके बस निर्माण पर जोर देना था।

क्या इस दुर्घटना को होने से रोका जा सकता था ?

मैंने कई सुरंगों के निर्माण पर काम किया, बहुत सारी सुरंगों में कई बार ऐसी स्थितियाँ उत्पन्न हो जाती हैं कि कई स्थानों पर सुरंगें ढह जाती हैं, इन स्थितियों में, आगे बढ़ने के लिए बाईपास का उपयोग किया जाता है। सिलक्यारा सुरंग के ढहने का बड़ा मुद्दा बनने का मुख्य कारण यह था कि इसमें 41 लोग फंसे हुए थे, अन्यथा इन समस्याओं से आमतौर पर निपट लिया जाता है।

क्या हम यह कह सकते हैं कि भूवैज्ञानिक जांच में ऐसी कुछ चीजें पहचानी नहीं गई, जो सुरंग की विफलता का कारण बनीं ?

जब अंतिम परिणाम शून्य हो, तो हम कह सकते हैं कि

लापरवाही और जांच उचित न होने की वजह से ये एक्सीडेंट हुआ। भूवैज्ञानिक जांच में हम किसी क्षेत्र में मौजूद दोषों को खोजते हैं, जैसे वहां कोई भी भ्रंश या शीयर क्षेत्र मौजूद है या नहीं, फिर उनकी पुष्टि की जाती है, ये कारक सुरंग निर्माण में बाधा उत्पन्न कर सकते हैं। इन क्षेत्रों की जाँच करने के साथ-साथ, हम मौजूद शैलों के गुणों और प्रकार के बारे में भी जाँच करते हैं। तनाव और विरूपण के मापांक के लिए सभी तकनीक (इन-सीटू) कार्यस्थल पर परीक्षण किए गए हैं, इसलिए हम मान सकते हैं कि इन प्रक्रियाओं का पालन नहीं किया गया था। जब आपके पास डेटा नहीं है, पैरामीटर पूर्ण नहीं हैं तो बनाया गया डिजाइन भी गलत रहा होगा।

जब भी सुरंग बनाने का काम किया जाता है तो तीन चीजें बेहद महत्वपूर्ण होती हैं, खासकर हिमालयी क्षेत्र में, सबसे पहले टेक्टोनिक फीचर्स, वहां किसी तरह का थ्रस्ट जोन, या फॉल्ट तो नहीं है। दूसरा, इन-सीटू तनाव का स्तर। तीसरा, हमें यह जांचने की जरूरत है कि कोई ऐसा क्षेत्र तो नहीं है जहां से पानी प्रवेश कर सके, ये हाइड्रो जियोलॉजिक स्थिति हैं। पानी हम इंसानों के लिए बहुत महत्वपूर्ण है लेकिन अगर यह सुरंग की संरचना में प्रवेश कर जाए तो बड़ा खतरा पैदा कर सकता है।

क्या स्थिति को संभालने और हल करने के लिए किसी विदेशी विशेषज्ञ को बुलाने की जरूरत थी ?

मेरे अनुसार इसकी जरूरत नहीं थी, भारत में जहां भी इस तरह की परिस्थितियां पैदा होती हैं, हम ही उससे उचित रूप से निपटते हैं। यहाँ के लोग भी अच्छा काम कर सकते थे।

विदेशी विशेषज्ञ ने भी 'ऑगर ड्रिलिंग' का सुझाव दिया जिससे कोई फायदा नहीं हुआ। यदि आप किसी सुरंग के अंदर एकत्रित ढीले पदार्थ जिसे मलबा कहते हैं, के अंदर एक पाइप डालते हैं, तो यह मुश्किल होता है। मलबे के अंदर स्टील जैसी कोई चीज दबी हुई या फंसी हुई हो सकती है, जो 'ऑगर ड्रिलिंग' में पाइप के संपर्क में आने पर विस्फोट कर सकती है। इसलिए यह एक सुरक्षित विकल्प नहीं हो सकता। अंत में विशेषज्ञ 'मैनुअल ड्रिलिंग' का सुझाव देते हैं, जिसे रैट माइनिंग कहा जाता है, रैट माइनिंग या रैट होल माइनिंग एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें बहुत छोटी सुरंगें खोदी जाती हैं। नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल (एनजीटी) ने 2014 में अवैज्ञानिक होने के कारण रैट-होल खनन पर प्रतिबंध लगा दिया था। आखिरकार रैट माइनर्स ने सारा काम किया और 24 घंटे में 12 मीटर खुदाई की और फंसे हुए लोगों को उनकी मदद से सुरक्षित बाहर निकाला गया।

भविष्य में इस तरह की दुर्घटना न हो इसके लिए क्या सावधानियां बरतनी चाहिए?

सुरंग खोदने से पहले किसी क्षेत्र की जांच-पड़ताल बेहद महत्वपूर्ण होती है। सुरंग के बारे में भू वैज्ञानिक जानकारी जानने के लिए आपको ड्रिलिंग करने की आवश्यकता होती है, सुरंग सर्वेक्षण में भू वैज्ञानिक जांच, और भू भौतिकीय जांच की जाती है। फिर छोटे व्यास का ड्रिफ्ट बनाया जाता है, ताकि भू वैज्ञानिक अन्दर प्रवेश कर सकें और वहां की भू वैज्ञानिक स्थितियों का मानचित्र बना सकें। फिर परिस्थितियाँ अनुकूल होने पर सुरंग का निर्माण किया जाता है, लेकिन इन दिनों शॉर्टकट अपनाया जाता है। उचित जांच के बिना सुरंग की खुदाई शुरू कर दी जाती है। यह बिल्कुल भी आदर्श और सुरक्षित स्थिति नहीं है। 4-5 किमी लंबी सुरंग में आप सिर्फ दो जगह खुदाई अथवा ड्रिलिंग कर, पूरी भूवैज्ञानिक व्याख्या नहीं कर सकते। जब आपके पास पर्याप्त डेटा नहीं होता है, ऐसे में कम डेटा के आधार पर जो व्याख्याएं सामने आती हैं वे गलत होती हैं। इसलिए इस तरह की किसी भी दुर्घटना को रोकने के लिए उचित जांच, अन्वेषण और फिर मैपिंग कर उसके बाद ही परियोजनाएं शुरू की जानी चाहिए।

डॉ॰ नवानी आपने हमें बहुमूल्य समय दिया इसके लिए मैं विज्ञान परिचर्चा की ओर से धन्यवाद करती हूँ। आशा है कि भविष्य में आपका मार्गदर्शन का लाभ पूरे उत्तराखण्ड को मिलता रहेगा।

स्टेम शिक्षा और नई शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 में समन्वय

डी॰के॰ पाण्डेय

स्टेम शब्द विज्ञान, इंजीनियरिंग, प्रौद्योगिकी एवं गणित का संक्षिप्त रूप है। इन चार शब्दों का जोर कार्यक्षेत्र में नवाचार समस्या का निदान करना तथा वास्तविक दुनिया को समझते हुए विद्यार्थियों में तथ्य परक विचार एवं आलोचनात्मक सोच के विकास पर जोर देता है। विद्यार्थियों में स्टेम शिक्षा के माध्यम से उनके द्वारा चुने गए कार्य क्षेत्र में उद्यमी होने की भावना का विकास करना भी है। स्टेम शिक्षा प्रणाली का मुख्य लक्ष्य विद्यार्थी जो भी सीख रहें हैं उसको वास्तविक जिन्दगी में उपयोग करने के लायक बनाना है। यह प्रणाली विद्यार्थियों में व्यवहारिक कुशलता एवं उत्सुकता की भावना को उत्पन्न करके उन्हें भविष्य के उद्यमी के तौर पर तैयार करती है ताकि वे अपने चुने हुए कार्य क्षेत्र में सक्षम हो पाएं।

अमेरिका की राष्ट्रीय विज्ञान प्रतिष्ठान के विज्ञान प्रबंधक द्वारा स्टेम शिक्षा प्रणाली को 2001 में अस्तित्व में लाया गया था। शिक्षा के क्षेत्र में यह दस्तावेज अमेरिका की राष्ट्रीय विज्ञान, इंजीनियरिंग एवं चिकित्सा अकादमी द्वारा तैयार कराया गया था। इसकी देखा-देखी विश्व के कई देशों ने स्टेम को अपने राष्ट्रीय पाठ्यक्रम में शामिल कर मानव पूंजी को उत्पादक कामगार के तौर पर तैयार करने हेतु अपनाया था।

पारम्परिक शिक्षा प्रणाली से हटकर, स्टेम शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थियों को उनके द्वारा चुने गए क्षेत्र से संबंधित दैनिक उपयोग में आने वाली जानकारी तथा उन तकनीकों से अवगत कराना है, जो वास्तव में आज की दुनिया उपयोग कर रही है। यूनेस्को के अनुसार आज के शैक्षिक माहौल में स्टेम शिक्षा के द्वारा ऐसा पाठ्यक्रम तैयार करना है जो विद्यार्थियों में सक्षमता उत्पन्न करे। इसकी शुरूआत स्कूल की प्रारम्भिक सीढ़ी से होनी चाहिए। इसका उद्देश्य विद्यार्थियों की रचनात्मकता कुशलता को चुनौती देकर खासकर विश्व की समस्याओं का, जो भी उनका सीखने का क्षेत्र है, उसमें व्यवहारिक हल ढूंढना है। स्टेम प्रणाली में सीखने पर आधारित प्रोजेक्ट तैयार करने पर जोर दिया जाता है।

राष्ट्रीय विज्ञान और प्रौद्योगिकी संचार परिषद (एनसीएसटीसी) जो कि भारत सरकार के विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग का एक महत्वपूर्ण अंग है। सन् 1993 से 10 से 17 वर्ष की आयु के बालकों में नैसर्गिक उत्सुकता एवं वैज्ञानिक मानसिकता

उत्पन्न करने के लिए राष्ट्रीय बाल कांग्रेस के माध्यम से प्रतिवर्ष गोष्ठी का आयोजन कर सफलतापूर्वक कार्य कर रही है। इसमें उभरते हुए वैज्ञानिकों को समूह में कार्य कर सामाजिक समस्याओं का हल ढूंढने के लिए प्रेरित किया जाता है। इसमें वैज्ञानिक विधियों का अनुसरण करते हुए शोध एवं नवाचार व आलोचनात्मक सोच द्वारा व्यवहारिक हल निकालने हेतु प्रेरित किया जाता है। डीएसटी की एक इकाई (आयरिस) द्वारा स्टेम में शोध एवं नवाचार हेतु प्रयास किये गये जिससे एनसीएसटीसी द्वारा उत्प्रेरित होकर सन् 2006 से राष्ट्रीय स्तर पर सार्वजनिक निजी भागीदारी बढ़ाने हेतु प्रयास किये जा रहे हैं। आयरिस 2 विषयों में प्रतियोगिता का आयोजन करती है और इसके विजेता, भारत की 'टीम इंडिया' का हिस्सा बनकर अंतर्राष्ट्रीय विज्ञान और अभियांत्रिकी मेले में भाग लते हैं। इस मेले में 70-80 देशों की टीमें अमेरिका जाती है। इस राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के कार्यक्रम को मूर्तरूप देने का कार्य एक्ससटेम्पलर एजुकेशन लीकरस डंड दिल्ली द्वारा डीएसटी एवं ब्राडकम के सक्रिय सहयोग से सम्पन्न किया जाता हैं।

इंस्पायर मानक (मिलीयन माइंडस आगमेंटींग नेशनल एस्पीरेश्म एंड कॉलेज) योजना के अन्तर्गत दस लाख 10 से 15 वर्षीय स्कूली विद्यार्थियों जिनमें विज्ञान की भौतिक सोच एवं नवाचार की भावना समाज के क्रियात्मक एवं नवाचार के विकास को प्रेरित करने के डीएसटी एवं भारतीय नवाचार प्रतिष्ठान द्वारा क्रियान्वित की जाती है।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग (डीएसटी) ने एक ज्योति विज्ञान कार्यक्रम की शुरूआत की है। कार्यक्रम की सन् 2019-20

से स्कूली स्तर पर शुरूआत हुई है। यह कार्यक्रम सन् 2019–20 से स्कूली स्तर पर मेधावी छात्राओं (कक्षा–9 से 12 तक) को आगे के लिए स्टेम शिक्षा ग्रहण करने के लिए प्रोत्साहित करता है। यह कार्यक्रम विद्यार्थियों के स्कूल से लेकर शोध उपाधि ग्रहण करने तक की अवधि के लिए है।

ख्याति प्राप्त इसरो भी 'युविका' नामक कार्यक्रम संचालित करता है, जिसका उद्देश युवाओं को उनके आरम्भिक काल से ही अन्तरिक्ष से संबंधित प्रौद्योगिकी एवं उपयोगिता के लिए प्रोत्साहित कर उन्हें स्टेम आधारित शोध के लिए प्रेरित करना है।

प्रगतिशील शिक्षा नीति पर भारतीय शिक्षा प्रणाली विकसित हो रही है। इसमें नवीनता के समावेश पर जोर है। नीति निर्माता स्टेम शिक्षा को विश्व की उच्च कोटि की शिक्षण व्यवस्था के साथ ताल–मेल के पक्षधर हैं।

उन्नत पाठ्यक्रम में स्टेम शिक्षा का समावेश आसान है। नई शिक्षा नीति प्रायोगिक शिक्षण व्यवस्था को प्रोत्साहित कर भविष्योन्मुखी होने पर जोर देती है। नई शिक्षा नीति का जोर आधारभूत तथ्यों, समस्या निराकरण के लिए विचारों की उपयोगिता, आलोचनात्मक सोच, जानकारी प्रेरित खोज आधारित विमर्श एवं विश्लेषण पर आधारित शिक्षण एवं समाज को प्रभावित करने वाले पहलुओं पर आधारित है।

प्रायोगिक एवं कार्य करके सीखने की प्रक्रिया का स्टेम प्रणाली में महत्वपूर्ण योगदान है। कृत्रिम मेघा एवं डिजाइन आधारित वैचारिकता आने वाले समय में स्टेम के मुख्य घटक होंगे। नई शिक्षा प्रणाली भी बहुआयामी प्रयत्नों पर आधारित है। स्टेम शिक्षा प्रणाली जीवन के आरम्भिक सोपान में ही छात्र–छात्राओं में अनुशासन, मान–मर्यादा एवं सामाजिक कुशलता पर जोर देती है।

सरकार का यह भी मानना है कि स्टेम शिक्षा एक विकल्प नहीं बल्कि आवश्यकता हो गई है। आधुनिक कार्य क्षेत्रों में विद्यार्थियों को शामिल करने के लिए इसे आसानी से वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में स्थापित किया जा सकता है। स्टेम शिक्षा व्यवस्था का उद्देश्य विज्ञान शिक्षा को रटन्तता से अलग कर एवं स्कूलों में पाठ्यक्रमों का बोझ हल्का कर आवश्यकतानुसार आधारभूत तथ्यों की जानकारी देने वाली आलोचनात्मक सोच, सर्जनात्मकता एवं समस्याओं के समाधान को प्रोत्साहित करना है।

रटन्ता एवं स्टेम शिक्षण में अन्तर स्पष्ट है–

रटन्ता

1– यह पारम्परिक सीखने की विधि है जिसमें तथ्यों और जानकारियों को बार–बार दोहराने से याद किया जाता है।

2– सूत्रों एवं गणितीय तालिकाओं, कविताओं को याद करना।

3– भारत में प्राचीन काल से अभी तक यही व्यवस्था चल रही है।

4– इस प्रणाली में सीखने वाला व्यक्ति तथ्यों को बिना समझे सीख या ग्रहण कर लेता है।

5– सीखने वाला व्यक्ति दो तथ्यों में संबंध स्थापित नहीं कर पाता है।

स्टेम शिक्षा

इसके फायदे निम्न हैं–

1– यह व्यवस्था करके सीखने पर आधारित है।

2– इसमें चार बड़े शिक्षा के क्षेत्र विज्ञान, प्रौद्योगिकी, गणित अभियांत्रिकी का समावेश है।

3– राष्ट्रीय विज्ञान फाउंडेशन का अनुमान है कि भविष्य में 86 प्रतिशत अवसर इन चार क्षेत्रों में ही होंगे।

4– स्टेम शिक्षा प्रणाली विद्यार्थियों में नेतृत्व क्षमता का विकास करने में सक्षम है।

भारत सरकार के नीति आयोग ने स्टेम शिक्षा के महत्व को ध्यान में रखकर अटल नवाचार मिशन को शुरू करा है। इसका उद्देश्य उद्यमता नवाचार की संस्कृति को विकसित करना है। इसके अन्तर्गत चुने हुए विद्यालयों में अटल टिंकरिंग लैब स्थापित करना है। कृत्रिम मेधा स्कूल एवं प्रयोगशालाएं विद्यार्थियों में भविष्य में शिक्षण को प्रोत्साहित करेंगी। अटल प्रयोगशालाएं जो कि स्वयं में अत्याधुनिक है, विद्यार्थियों को भारत में एक ऐसा मंच प्रदान करती हैं, जो उनके आगे बढ़ने में सहयोग करता है।

स्टेम शिक्षण के फायदे

1- यह नवाचारी सोच को बढ़ावा देती है।

2- उत्सुकता की भावना का विकास करती है।

3- सृजनता को प्रेरित करती है।

4- संचार में सहयोग को बढ़ावा

5- भरोसे को बढ़ाकर गृहणता एवं विफलता को समावेशित करना।

6- विद्यार्थियों को वैज्ञानिक तथ्यों, प्रौद्योगिकी कुशलता, अभियांत्रिकी, रूप रेखा एवं गणितीय आंकलन, प्राकृतिक क्रिया कलापों के प्रति जागरूकता एवं समझने की भावना और समय-समय पर समाज में आने वाली चुनौतियों का सामना करने के लिए सक्षम बनाना।

7- विद्यार्थियों को वास्तविक जिन्दगी में आने वाली परिस्थितियों को औपचारिक और अनौपचारिक तौर पर निराकरण करने योग्य बनाना।

8- सामाजिक समस्याओं के निराकरण को ध्यान में रखकर शिक्षण व्यवस्था का निर्माण करना और व्यक्ति के अन्दर जिम्मेदारी की स्टेम आधारित सकारात्मक भावना का विकास करना।

स्टेम शिक्षण में व्यवसायिक प्रतिष्ठानों व निगमों का प्रवेश

सरकारी प्रयत्नों को सहयोग प्रदान करने के लिए व्यवसायिक प्रतिष्ठानों द्वारा निगम सामाजिक दायित्व योजना के तहत समाज के उत्थान के लिए दायित्वों का निर्वहन कराया जाने लगा है। निगमों के सामाजिक दायित्व के तहत निगमों से अपेक्षा की गयी कि वे स्टेम प्रयोगशाला निर्माण, इन्टर्नशीप कार्यक्रम, हैकथोंस, कोडिंग इंवेन्ट, प्रतियोगिताएं, मेंटरशिप अथवा संरक्षणत्व जैसी बहुत से विधाओं को प्रोत्साहन दें तथा उनका खर्च वहन करें। इस कार्य में लड़कियों और वंचित समुदायो के स्कूलों को वरीयता दें।

सरकारी, निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र की भागीदारी द्वारा समन्वित एवं पूर्ण समाहित परिस्थिति तंत्र का निर्माण स्टेम शिक्षा के माध्यम से करके भारत की आर्थिक और सामाजिक प्रगति को बढ़ावा उद्यमिता द्वारा दिया जाय। स्टेम को इस तरह से आगे बढ़ाया जाय कि वह वर्तमान पाठ्यक्रमों को बदलने के बजाय उनका पूरक बन कर कार्य करें।

भारत सरकार और शिक्षा प्रौद्योगिकी स्टेम शिक्षा को प्रोत्साहित करने में एक दूसरी की मदद कर रहे हैं। भारत सरकार ने आय स्टेम नामक एक राष्ट्रीय पोर्टल की शुरूआत की है। यह एक तरह की केन्द्रीय प्रणाली या हब है जो स्टेम से संबंधित कई प्रयासों यथा 'स्वयं' जो सीधे तौर पर कौशल विकास एवं विभिन्न प्रकोष्टों को विभिन्न प्रौद्योगिकी उपकरणों द्वारा शिक्षण संस्थाओं में उपयोग के लिए है। अटल टिंकरिंग प्रयोगशाला विद्यार्थियों के स्वयं के प्रयासों को परखने का स्कूलों में मौका देगी।

आय-स्टेम पहल

भारत के प्रधानमंत्री ने जनवरी-2022 में 'आय-स्टेम' योजना का विज्ञान प्रौद्योगिकी, अभियांत्रिकी और गणित के राष्ट्रीय 'गेट वे' का अवतरण कराया था। इसका उद्देश्य उन महिलाओं की भागीदारी को बढ़ावा देना है जो स्टेम में है तथा नयी प्रौद्योगिकी को विकसित करना चाहते हैं। इसके अलावा इसमें स्टेम क्षेत्र में रूचि रखने वाले विद्यार्थियों को बढ़ावा देने के लिए भी प्रावधान है।

रोबो शिक्षा केन्द्र

यह स्टेम इंडिया प्रतिष्ठान एवं निगमों के समूह का एक ऐसा अद्भूत प्रयत्न है जिसमें युवा विद्यार्थियों को रोबोटिक्स से परिचित करवा कर भविष्य में इस क्षेत्र के कर्णधारों को तैयार करना है। एन सी ई आर टी को राष्ट्रीय पाठ्यक्रम संरचना के निर्माण के दायित्व के चलते इसकी भी जिम्मेदारी दी गयी है। अगर कोई विद्यार्थी किसी अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता में भाग लेना चाहता है तो उसके लिए इसमें परामर्शदाता व अन्य सुविधाओं को देने का भी प्रावधान है।

किसी भी देश के आगे बढ़ने और विकास को नापने का पैमाना नवाचार में उसका योगदान क्या है? भारत सरकार पूरी तन्मयता के साथ स्टेम शिक्षा प्रणाली पर जोर दे रही है वह भी प्रारम्भिक शिक्षा के स्तर से। नयी शिक्षा नीति 2020 में भी स्टेम शिक्षा को एक महत्वपूर्ण घटक मानते हुए भविष्य की शिक्षा व्यवस्था के लिए शामिल किया है। युवाओं की सृजनता और अपने आपको साबित करने के लिए सरकार हर तरह से सहायता देने को तत्पर है ताकि वे भविष्य में नेतृत्व कर सकें और नवाचारी होने के साथ उद्यमता भी उनमें विकसित हो। यही समय की आवश्यकता और उभरते हुए भारत के लिए जरूरी भी है।

18वां उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी सम्मेलन
(18वां यूएसएसटीसी, 2024)
8–9 फरवरी, 2024
भारतीय ज्ञान विज्ञान परम्परा, विश्व शांति और सद्भाव

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी सम्मेलन (यूएसएसटीसी) का वार्षिक आयोजन विचार-विमर्श तथा ज्ञान विनिमय का एक ऐसा सशक्त मंच है जहाँ राज्य के समेकित विकास हेतु वैज्ञानिक एवं तकनीकी मानव संसाधन तथा उनकी अद्यतन उपलब्धियों के बेहतर उपयोग की रणनीति तैयार करने के लिए अनुसंधान, युवा वैज्ञानिकों को राज्य में विज्ञान और प्रौद्योगिकी को बढ़ावा देने में योगदान देने के लिए एक मंच प्रदान करता है। सम्मेलन में युवा शोधकर्ताओं द्वारा अनुसंधान प्रस्तुतियों के तकनीकी सत्रों के साथ-साथ प्रख्यात वैज्ञानिकों, विद्वानों, विचारकों और नीति वं विकास प्रयासों की वर्तमान स्थिति की समीक्षा की जाती है। इस वर्ष 18वें उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी सम्मेलन 2024 (18वीं यूएसएसटीसी 2024) का आयोजन दिनांक से 8 से 9 फरवरी 2024 तक उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी एवं कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल के सहयोग से उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय परिसर, हल्द्वानी में किया गया है। 'भारतीय ज्ञान विज्ञान परम्परा-विश्व शांति और सद्भाव' आयोजन की विषय-वस्तु थी।

इस 18वें उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी सम्मेलन का विमर्श पारंपरिक एवं स्वदेशी ज्ञान प्रणाली पर केन्द्रित रही है, इसका उद्देश्य पारंपरिक स्वदेशी ज्ञान प्रणालियों और आधुनिक विज्ञान के मध्य बढ़ते बिलगाव को कम करने की दिशा में एक नये चिन्तन का सूत्रपात करना है कि किस प्रकार भिन्न प्रतीत होते हुए भी पारंपरिक ज्ञान और आधुनिक विज्ञान प्रणालियाँ एक दूसरे से सामंजस्य रखते हुए स्वयं को निरन्तर समृद्ध कर सकती हैं। यह सम्मेलन एक समावेशी मंच के रूप में प्राचीन भारतीय मनीषा और समकालीन युग में उसकी प्रासंगिकता की खोज के लिए विभिन्न क्षेत्रों के विद्वानों, वैज्ञानिकों, शोधार्थियों और प्रयोगकर्ताओं को एक साथ विमर्श का अवसर प्रदान करेगा। इसका उद्देश्य भारत की सदियों पुरानी ज्ञान परंपरा को उसके समकालीन एवं आधुनिक आयामों में राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी), 2020 में परिकल्पित विभिन्न शैक्षिक धाराओं में शामिल करने के तरीके भी खोजना है।

विषयवस्तु: पारंपरिक और स्वदेशी ज्ञान प्रणाली

भारत की पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों के विकास में न केवल विभिन्न समसामयिक प्रौद्योगिकियों का समावेश रहा है, वरन् जीवन की गहन दृष्टि तथा राजनीति और सामाजिक संरचनाओं का विमर्श भी शामिल है। नि:संदेह, भारत के प्राचीनतम वैदिक ज्ञान के केन्द्र में परमसत्ता का उद्घाटन है, परन्तु उसकी उपांगीय ज्ञान परंपरा में आयुर्वेद, ज्योतिष, खगोल, वास्तुकला, मूर्तिकला, धातु एवं युद्ध शास्त्रों का वैज्ञानिक निरूपण भी समान रूप से सम्मिलित है। इस परंपरा में जहाँ धर्मशास्त्र का विषद वर्णन है, वहीं प्रकृति के गोचर एवं अगोचर आयामों की गहन विवेचना भी देखने को मिलती है। इस प्रकार, भारतीय पारंपरिक ज्ञान परंपरा, अपनी संपूर्णता में, व्यापक वैज्ञानिक विश्वदृष्टि के साथ-साथ दार्शनिक, मानवतावादी, कलात्मक और समाजशास्त्रीय अन्वेषणों को भी अपने में संजोए हुए है।

भारत की पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों के मूल में वेद तथा उपनिषद् हैं, जिसमें शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छंद और ज्योतिष के छह वेदांग भी सम्मिलित हैं। यह पारंपरिक ज्ञान ग्रन्थों, उपनिषदों, अरण्यकों, पुराणों और दो महाकाव्यों, रामायण और महाभारत (जहाँ धर्म-शास्त्र का विशाल भंडार है) में निहित है।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र में प्रारम्भिक प्रबंधन और प्रशासन से लेकर कराधान, युद्ध और विदेश नीति तक शासन के कई पहलुओं को शामिल किया गया है। भारतीय दर्शन की छह प्रणालियाँ परमोच्च सत्य एवं सत्ता की एक व्यापक ऑन्टोलॉजी और ज्ञान मीमांसा प्रदान करती हैं। वैदिक संस्कृत साहित्य के साथ-साथ, तमिल संगम साहित्य, पाली और प्राकृत बौद्ध तथा जैन साहित्य भी इन्हीं अन्वेषणों को आगे ले जाते हैं। रहस्योद्घाटन, अंतर्ज्ञान, अनुभव और एक अनवरत प्रयोग जिसे साधना कहा गया है, भारत की सभी पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों का आधार है।

ऋषियों द्वारा अपने शिष्यों को प्रदान की गयी यह ज्ञान प्रणाली मौखिक परंपरा में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक चलती आयी है। दीर्घकाल तक गुरु-आश्रमों में संरक्षित इस पवित्र परंपरा में कागज और मुद्रण प्रौद्योगिकियों के आविष्कार के बाद एक बड़ा बदलाव परिलक्षित हुआ है, जिसके कारण अब सभी शास्त्रीय ग्रन्थ और उनकी टीकाएँ सभी शिक्षित गृहस्थों के लिए उपलब्ध हैं। आईसीटी के वर्तमान विकास ने इस प्राचीन ज्ञान को और अधिक लोकतांत्रिक बनाया है, और इसे समकालीन एवं आधुनिक वैज्ञानिक ज्ञान के साथ जोड़ने में मदद की है। इसके साथ ही, दुनिया भर में अनेकों संगठन और संस्थान पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों को संरक्षित और प्रबंधित करने के प्रयास में आगे आए हैं।

प्रथम खण्ड - प्लेनरी सत्र

18वें उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान सम्मेलन में विचार-मंथन सत्र, पैनल चर्चा और नए शोधपत्रों की प्रस्तुति 'विश्व शांति एवं सद्भाव संवर्धन में भारतीय ज्ञान विज्ञान परम्परा की भूमिका' विषय पर केन्द्रित होगी। इसमें निम्नांकित उप-विषय समाहित हैं, जिन पर छह सत्रों में गहन चर्चा की जाएगी।

भारतीय ज्ञान परम्परा

आधुनिक शिक्षा प्रणाली, जो मुख्य रूप से छात्रों को कैरियर विकास और आर्थिक सफलता के लिए आवश्यक कौशल और ज्ञान से लैस करने के लिए डिजाइन की गई है, ऐसे व्यावहारिक परिणामों पर अपनी सीमित दृष्टि के लिए आलोचना का केन्द्र रही है। इसके विपरीत, प्राचीन भारतीय ज्ञान परम्परा शिक्षा का एक व्यापक दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है जो भौतिक ज्ञान को आध्यात्मिक ज्ञान के साथ एकीकृत करती है।

भारतीय ज्ञान परम्परा परमार्थिक सत्ता, चेतना, नैतिकता तथा आंतरिक शांति और आनन्द की खोज को केन्द्र में रखती है। इन प्राचीन सिद्धांतों को वर्तमान शिक्षा प्रणाली में समाहित करने से शिक्षा का परिदृश्य अधिक संतुलित और समृद्ध हो सकता है। धर्म की व्यापक अवधारणा का पठन-पाठन इसका एक अनिवार्य हिस्सा हो सकता है। यह वर्तमान युग में विशेष रूप से प्रासंगिक है, जहां प्रौद्योगिकी, पर्यावरण और राजनीति सहित विभिन्न क्षेत्रों में नैतिक मुद्दे तेजी से सामने आ रहे हैं। इसके अलावा, भारतीय ज्ञान परंपरा का अनुप्रयोग अकादमिक शिक्षा से आगे बढ़ते हुए शिक्षण में भावनात्मक बुद्धिमत्ता, लचीलापन और सहानुभूति के विकास को अतिरिक्त बल प्रदान करता है।

विज्ञान और अध्यात्म

अध्यात्म और विज्ञान के बीच का अन्तर्संबन्ध सदैव से बहस का विषय रहा है। विज्ञान को दीर्घकाल से तर्कसंगति और निष्पक्षता के रूप में देखा गया है, जबकि आध्यात्मिकता विश्वास, रहस्यवाद और व्यक्तिपरक अनुभव से जुड़ी रही है। परन्तु, जैसे-जैसे इन दोनों ज्ञान-क्षेत्रों के विषय में हमारी समझ बढ़ी है, यह तेजी से स्पष्ट होता गया है कि उनके बीच एक महत्वपूर्ण संबंध है।

मूल सत्ता का अन्वेषण सदैव से आध्यात्मिकता और विज्ञान दोनों की विषय-वस्तु के केन्द्र में रहा है। अध्यात्म और विज्ञान दोनों ब्रह्मांड की मौलिक प्रकृति और उसके भीतर हमारी स्थिति को समझने के लिए प्रयत्नशील रहे हैं। जहाँ विज्ञान इस प्रश्न को अनुभवजन्य अवलोकन और प्रयोग के माध्यम से देखता है, वहीं आध्यात्मिक परंपराएं मूल सत्ता की प्रकृति को समझने के साधन के रूप में ध्यान और चिंतन के महत्व पर जोर देती हैं। ध्यान और चिंतन की परंपरा व्यक्ति को उसके सम्पूर्ण जगत के साथ अंतर्संबंध की गहरी भावना विकसित करने में मदद करती है तथा साथ ही ब्राह्मिक चेतना और ब्रह्मांड की प्रकृति की गहन अंतर्दृष्टि प्रदान करती है।

समग्र स्वास्थ्य और आयुर्वेद

आयुर्वेद चिकित्सा एक प्राकृतिक पद्धति है जिसका प्रादुर्भाव हजारों वर्ष पूर्व से भी पहले भारत में हुआ था। इस विचार के साथ कि व्याधि व्यक्ति की चेतना में असंतुलन या तनाव के कारण होती है, आयुर्वेद शरीर, मन, प्राण और पर्यावरण के बीच संतुलन स्थापित करने हेतु जीवन शैली में परिवर्तन और प्राकृतिक उपचारों को प्रोत्साहित करता है। आयुर्वेद का उपचार आंतरिक शुद्धिकरण की प्रक्रिया से प्रारम्भ होता है, तत्पश्चात् विशेष आहार, प्राकृतिक औषधियाँ, मालिश चिकित्सा, योग और ध्यान को सम्मिलित किया जाता है। सार्वभौमिक अंतर्संबंध की अवधारणा, शरीर-विधान या प्रकृति, तथा प्राण शक्ति या दोष आयुर्वेदिक पद्धति के प्राथमिक आधार हैं।

भारत में आयुर्वेद को पारंपरिक पाश्चात्य चिकित्सा, पारंपरिक चीनी चिकित्सा, प्राकृतिक चिकित्सा और होम्योपैथिक दवाओं के समकक्ष माना जाता है। भारत में आयुर्वेद चिकित्सक राज्य-मान्यता प्राप्त, संस्थागत प्रशिक्षण से गुजरते हैं तथा

आयुर्वेदिक संस्थानों को अनेक राज्यों में शैक्षणिक संस्था के रूप में स्वीकृति प्राप्त है।

योग विज्ञान

सहस्राब्दियों से गुरू द्वारा शिष्य को प्रदत्त अक्षुण्ण योग परंपरा भारत में अनवरत रूप से विकसित होती रही है। योग विद्या मानव मन और जीवन के अर्थ एवं रहस्यों के उद्घाटन को समर्पित एक गहन, व्यवस्थित, व्यक्तिपरक आंतरिक परीक्षण की विधा है। इसके केन्द्र में संकल्पना है कि मानव परम-सत्ता का एक अभिन्न अंग है, और इसलिए वह सत्ता की मूल स्थिति, सत-चित-आनंद का अनुभव करने में पूरी तरह से सक्षम है। चूंकि चेतना न केवल भौतिक जगत को नियंत्रित करती है, अपितु उसमें पूर्णरूपेण व्याप्त है। 'चिद्रूपेण परिव्याप्तं त्रैलोक्यं सचराचरम्', आनन्द की एक कल्याणमय समग्र स्थिति हमारी अंतर्निहित संभावना है, और इस प्रकार सभी सीमाओं से मुक्ति या मोक्ष मानव अस्तित्व का एक तर्कसंगत लक्ष्य है।

योग-विज्ञान प्राचीन काल से महर्षियों द्वारा विरासत के रूप में हमें सौंपी गयी जीवन-शैली और ज्ञान की उत्कृष्ट निधि है। प्राचीन भारतीय ग्रंथ, यथा वेद एवं उपनिषद इस ज्ञान के भंडार हैं। सम्पूर्ण जीवन के एकत्व का उद्घाटन और इस ज्ञान के दैनिक जीवन में व्यवहार की लक्ष्यपूर्ति के लिए योग-विज्ञान आसन, प्राणायाम, क्रिया, मुद्रा, बंध और षट्कर्म आदि की तकनीक को प्रयोग में लाता है। योग में एक अनुभवजन्य प्रयोगात्मक दृष्टिकोण की पद्धति है जिसमें विभिन्न शारीरिक और मानसिक क्रियाओं का अभ्यास और परिणामी प्रभावों को वैराग्य की निष्पक्ष भावना के साथ देखना शामिल है। योग विद्या के सभी प्रयोग और अनुभव सदैव से व्यक्तिपरक सत्यापन के लिए खुले हुए हैं।

वैदिक गणित, खगोल विज्ञान एवं ज्यामिति

भारत में कई स्कूल बोर्ड प्राचीन वैदिक गणित को औपचारिक रूप से स्कूली शिक्षा का अंग बनाने की प्रक्रिया में हैं। जब से माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने अपने रेडियो संबोधन, 'मन-की-बात' में वैदिक गणित का उल्लेख किया है, तब से यह विषय तमाम शिक्षाविदों के बीच चर्चा में आ चुका है। अथर्ववेद में हमें अंकगणित पर कुछ प्रारंभिक संकेत मिलते हैं, लेकिन गणित के क्षेत्र में पर्याप्त प्रगति केवल दूसरी सहस्राब्दी ईसा पूर्व में भारत में खगोलीय अध्ययन के विकास के साथ हुई।

अपनी उत्पत्ति के समय खगोल विज्ञान वैदिक अध्ययन की एक उपशाखा के रूप में विकसित हुआ। मान्यता है कि वेदांग ज्योतिष ने 1400 ईसा पूर्व के आसपास शीतकालीन संक्रांति की सटीक पहचान की थी।

सूर्य सिद्धांत (505 ईस्वी) को वेदांग ज्योतिष की सर्वोत्कृष्ट रचना माना गया है जिसमें सूर्य, चंद्रमा और अन्य ग्रहों की भू केन्द्रित प्रणाली में विभिन्न नक्षत्रों के सापेक्ष गति का मापन है, साथ ही सौर मंडल में विभिन्न खगोलीय पिंडों के भूमध्य रेखीय व्यास का अनुमान और उनकी कक्षाओं की गणना भी शामिल है। आर्यभट्ट (476-550 ई.पू.) पहले व्यक्ति थे जिन्होंने यह प्रतिपादित किया कि तारों की पश्चिम दिशा की गति पृथ्वी के अपनी धुरी पर घूमने के कारण होती है और उन्होंने बताया कि चंद्रमा और सौर मंडल के अन्य ग्रहों की चमक अनिवार्य रूप से परावर्तित सूर्य का प्रकाश है। उन्होंने यह भी प्रतिपादित किया कि किस प्रकार सूर्य एवं चन्द्र ग्रहण की सटीक भविष्यवाणी की जा सकती है। गणित और खगोल विज्ञान के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान देने वाले कुछ अन्य उल्लेखनीय नामों में वराहमिहिर (6वीं शताब्दी), ब्रह्मगुप्त (7वीं शताब्दी), भास्कर प्रथम (7वीं शताब्दी), भास्कर द्वितीय (12वीं शताब्दी), नारायण पंडित (14वीं शताब्दी) और माधव संगमग्रम (14वीं/15वीं शताब्दी) शामिल हैं।

भारतीय ज्ञान विज्ञान परम्परा, विश्व शांति और सद्भाव संवर्धन

भारत एक बहु-जातीय संस्कृतियों का देश है जहाँ विभिन्न धार्मिक, नस्लीय, सांस्कृतिक और भाषाई पहचान वाले लोग एक साथ सौहार्दपूर्वक रहते हैं। यह देश सांप्रदायिक सद्भाव के लिए जाना जाता है जो किसी परिपक्व लोकतंत्र की पहचान है। सद्भावपूर्ण जीवन वास्तव में सृष्टि का मूल सिद्धान्त है जो पृथ्वी पर हमारे सम्पूर्ण जीवन को नियंत्रित करता है।

सभी धर्म हमें सद्भाव, शांति और एकत्व से रहने और प्रेम और भाईचारे का संदेश फैलाने की शिक्षा देते हैं तथा मान्यताओं और आस्थाओं के प्रति लचीलेपन, सहिष्णुता और सहनशीलता का दृष्टिकोण रखने की बात करते हैं। यह युगबोध है कि आज समस्त मानव जाति को पृथ्वी पर एक ही परिवार, वसुधैव कुटुंबकम, के रूप में सौहार्दपूर्वक रहना चाहिए। प्राचीन काल से ही भारतीय ज्ञान परंपरा ने एक बृहत् एकात्मक दृष्टि को बढ़ावा दिया है, जहां सम्पूर्ण जीवन को एक ही सत्ता की अभिव्यक्ति के रूप में देखा गया है। 18वां उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी सम्मेलन 2024 भारतीय ज्ञान विज्ञान की इस प्राचीन परंपरा को मुख्य धारा से जोड़ते हुए हमारे शैक्षिक और शासकीय मॉडल में एक आदर्श बदलाव लाने का प्रयास है।

विशेष सत्र: आपदा प्रतिरोधी उत्तराखण्ड

पिछला वर्ष आपदा प्रबंधन की दृष्टि से उत्तराखंड के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण एवं भविष्यवादी रहा। राज्य ने आपदा प्रबंधन पर

विश्व सम्मेलन (28 नवंबर - 01 दिसंबर, 2023) का आयोजन किया जिसमें 50 से अधिक देशों के विशेषज्ञों और आपदा प्रबंधन से संबंधित प्रमुख राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों ने भाग लिया। सम्मेलन के दौरान विचार-विमर्श के आधार पर देहरादून डिक्लेरेशन (Dehradun Declaration) पेश किया गया। घोषणापत्र पांच सूत्री कार्यप्रणाली पर केंद्रित है जो देश में हिमालयी राज्यों के लिए प्रासंगिक है और विश्व के अन्य पर्वतीय क्षेत्रों के लिए भी लाभदायक हैं। इस सम्मेलन द्वारा राज्य ने सहयोगात्मक दृष्टिकोण के साथ चुनौतियों का अग्रिम मोर्चे से समाधान करने की अपनी प्रतिबद्धता प्रदर्शित की है। विभिन्न प्रकार की आपदाओं से बार-बार चुनौती मिलने के बावजूद, राज्य ने सिलक्यारा मॉडल के माध्यम से अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर नेतृत्व का प्रदर्शन किया है। इस दौरान प्रदर्शित प्रतिबद्धता और सक्रियता आने वाले समय में चर्चा का मुख्य विषय रहेगा। सिलक्यारा मॉडल एकीकरण और व्यावहारिक दृष्टिकोण से आपदा प्रबंधन के लिए अकादमिक, शोध, शासन, राजनैतिक नेतृत्व और रणनीतिक मोर्चों पर उद्धृत किया जाएगा। 18वीं उत्तराखंड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी सम्मेलन में आपदा प्रतिरोधी उत्तराखंड पर एक विशेष सत्र का आयोजन किया जाना है। निकट भविष्य में राज्य संपूर्ण हिमालय की आवश्यकताओं को संबोधित करने के लिए विश्व सम्मेलन का आयोजन करेगा। इस तरह के सम्मलेन सम्पूर्ण हिमालय, हिंदूकुश और अन्य पर्वतीय प्रणालियों में आपदा प्रबंधन में सक्रीय भूमिका निभाएगा।

तकनीकी सत्र

परिषद उत्तराखण्ड राज्य में स्थित विभिन्न अनुसंधान एवं विकास अनुसंधान संस्थानों, विश्वविद्यालयों, कॉलेजों और किसी भी मान्यता प्राप्त, निजी या स्वायत्त विज्ञान और प्रौद्योगिकी संगठनों में अध्ययनरत/कार्यरत अनुसंधान अध्येताओं और शोधकर्ताओं से विषय-वस्तु से संबंधित मूल शोध कार्यों, प्रयोगों और सफलता की कहानियों के सार निम्नलिखित विषयों में आमंत्रित किया गया है-

1. कृषि विज्ञान
2. जैव प्रौद्योगिकी, जैव रसायन और सूक्ष्म जीव विज्ञान
3. वनस्पति विज्ञान, पर्यावरण विज्ञान और वानिकी
4. रसायन विज्ञान
5. भूविज्ञान, भू-आकृति विज्ञान, भू-भौतिकी, ग्लेशियोलॉजी, भूगोल, रिमोट सेंसिंग और जीआईएस सहित पृथ्वी विज्ञान
6. इंजीनियरिंग विज्ञान, सामग्री विज्ञान और नैनो प्रौद्योगिकी
7. गृह विज्ञान, स्वास्थ्य एवं पोषण
8. गणित, सांख्यिकी और कंप्यूटर विज्ञान
9. चिकित्सा विज्ञान और औषधि विज्ञान
10. भौतिक विज्ञान
11. ग्रामीण विज्ञान, प्रौद्योगिकी और समाज
12. प्राणी शास्त्र, पशु चिकित्सा विज्ञान और पशुपालन
13. स्वदेशी और पारंपरिक ज्ञान प्रणालियाँ आदि।
14. वर्ष का अन्वेषक अवार्ड

मानसखण्ड विज्ञान केन्द्र अल्मोडा

मानसखण्ड विज्ञान केंद्र, अल्मोड़ा में उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान और प्रौद्योगिकी परिषद (यूकॉस्ट) द्वारा एक महत्वपूर्ण और परिवर्तन कारी पहल है। यह केंद्र क्षेत्रीय विज्ञान केंद्र, देहरादून के बाद उत्तराखण्ड में दूसरा विज्ञान केंद्र है, और राज्य के कुमांऊ क्षेत्र में पहला है। इस केंद्र का उद्देश्य उत्तराखण्ड के विभिन्न क्षेत्रों में विज्ञान और प्रौद्योगिकी को बढ़ावा देना है, जिसमें अल्मोड़ा जिले के ग्रामीण क्षेत्रों पर विशेष ध्यान दिया गया है। इस केंद्र का अंतर्निहित विचार यह है कि व्यावहारिक गतिविधियों से वैज्ञानिक और आलोचनात्मक सोच के साथ-साथ समस्याओं को हल करने की क्षमता विकसित की जा सके। मानसखण्ड विज्ञान केंद्र, अल्मोड़ा का उद्घाटन उत्तराखण्ड के माननीय मुख्यमंत्री श्री पुष्कर सिंह धामी जी द्वारा 10 मार्च, 2024 को वर्चुअली किया गया था। यह केंद्र सभी उम्र के लोगों, विशेषकर छात्रों के लिए विज्ञान को सुलभ बनाने के लिए समर्पित है। केंद्र अपने विभिन्न दीर्घाओं के माध्यम से जलवायु परिवर्तन, पारंपरिक औषधि, मनोरंजन विज्ञान और खगोल विज्ञान (तारामंडल) पर विशेष जोर देने के साथ विभिन्न वैज्ञानिक क्षेत्रों में ज्ञान

प्रदान करता है। केंद्र में एक नव प्रवर्तन केंद्र भी है जहाँ छात्र भौतिकी, रसायन विज्ञान, जीव विज्ञान, इलैक्ट्रिकल, इलेक्ट्रॉनिक्स और रोबोटिकस, कोडिंग, आदि परियोजनाओं पर काम कर सकते हैं। मानसखंड विज्ञान केंद्र न केवल विज्ञान और पर्यावरण की गहरी समझ को बढ़ावा देता है, बल्कि समुदाय को सार्थक और प्रभावशाली तरीकों से जोड़ता है, स्थिरता और वैज्ञानिक जिज्ञासा की संस्कृति को बढ़ावा देता है।

आज, मानसखण्ड विज्ञान केंद्र अल्मोड़ा में एक प्रमुख आकर्षण बन गया है, जहाँ नियमित रूप से स्कूल, कॉलेज और विभिन्न संस्थानों से विद्यार्थी, शोधार्थी एवं अध्यापकगण आते हैं। चमोली और पिथौरागढ़ जैसे दूरदराज के जिलों से छात्र भी इस केंद्र में आ रहे हैं, जो इसकी बढ़ती प्रतिष्ठा को दर्शाता है। इसके अतिरिक्त, मानसखण्ड विज्ञान केंद्र अब अंतर्राष्ट्रीय पर्यटकों को भी आकर्षित कर रहा है, जिससे इसकी वैश्विक छवि में वृद्धि हो रही है। 15 मई, 2024 से शुरू होकर, केंद्र रोबोटिक्स और कोडिंग, इलेक्ट्रॉनिक्स, इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग, जीव-विज्ञान, भौतिकी, रसायन विज्ञान और कला और शिल्प पर ध्यान केंद्रित करते हुए ग्रीष्मकालीन शिविरों का आयोजन कर रहा है। ये शिविर युवा वैज्ञानिकों को पोषित करने और उन्हें विभिन्न वैज्ञानिक विषयों में व्यावहारिक अनुभव प्रदान करने के लिए परिकल्पित किए गए हैं। अल्मोड़ा में मानसखण्ड विज्ञान केंद्र वैज्ञानिक जागरूकता और पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा देने के लिए कई महत्वपूर्ण कार्यक्रमों और समारोहों के आयोजन में भी सक्रिय रूप से शामिल है। इसके द्वारा आयोजित प्रमुख कार्यों में शामिल हैं।

28 फरवरी 2024 को राष्ट्रीय विज्ञान दिवस

मानसखण्ड विज्ञान केंद्र ने राष्ट्रीय विज्ञान दिवस पर विज्ञान और इसकी प्रगति का जश्न मनाने और उसे बढ़ावा देने के लिए कई आउटरीच कार्यक्रम और शैक्षिक गतिविधियाँ आयोजित कीं। केंद्र ने तीन स्थानीय स्कूलों में आउटरीच कार्यक्रम आयोजित किए, जिसमें अनेक कार्यक्रमों का आयोजन किया गया जिससे विद्यार्थियों में विज्ञान के प्रति जिज्ञासा को बढ़ावा मिला। इसके अतिरिक्त, मानसखण्ड विज्ञान केंद्र ने अल्मोड़ा में सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय में एक विशेष जागरूकता कार्यक्रम का भी आयोजन किया गया। इसके अतिरिक्त, केंद्र ने मानसखण्ड विज्ञान केंद्र में व्याख्यानों की एक श्रृंखला आयोजित की, जिसमें छात्रों और आम जनमानस दोनों के द्वारा भागीदारी की गई। इन व्याख्यानों में जलवायु परिवर्तन और पारंपरिक औषधि से लेकर इलैक्ट्रॉनिक्स और रोबोटिक्स में अत्याधुनिक नवाचारों तक, वैज्ञानिक विषयों की एक विस्तृत श्रृंखला शामिल थी।

21 मार्च, 2024 को अंतर्राष्ट्रीय वन-दिवस

मानसखंड विज्ञान केंद्र, अल्मोड़ा ने इस दिन को वनों के महत्व और टिकाऊ वन प्रबंधन पर केंद्रित गतिविधियों के साथ मनाया। कार्यक्रमों में वृक्षारोपण अभियान, वनसंरक्षण पर शैक्षिक सत्र और वनों के पारिस्थितिक लाभों पर परस्पर संवादात्मक चर्चाएं शामिल हैं।

22 अप्रैल, 2024 को विश्व पृथ्वी-दिवस

पृथ्वी दिवस के उपलक्ष्य में, मानसखंड विज्ञान केंद्र ने पर्यावरण संरक्षण और स्थिरता के बारे में जागरूकता बढ़ाने के लिए विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किए। इन गतिविधियों में सभी उम्र के प्रतिभागियों को शामिल करने और पारिस्थितिक मुद्दों और टिकाऊ प्रथाओं के महत्व की गहरी समझ को बढ़ावा देने के लिए परिकल्पित किया गया था। गतिविधियों में सफाई अभियान, वाद-विवाद, प्रश्नोत्तरी, चित्रकला प्रतियोगिताएं, स्किट और पर्यावरण कार्यशालाएं शामिल हैं, जो सभी जलवायु परिवर्तन और नवीकरणीय ऊर्जा जैसे महत्वपूर्ण विषयों पर केंद्रित हैं।

22 मई, 2024 को जैव-विविधता के लिए अंतर्राष्ट्रीय दिवस

केंद्र द्वारा यह दिवस जैव-विविधता के महत्व और विभिन्न प्रजातियों और पारिस्थितिकी प्रणालियों की रक्षा की आवश्यकता पर प्रकाश डालने वाले कार्यक्रमों के साथ मनाया गया। केंद्र ने प्रतिभागियों को उत्तराखंड की समृद्ध जैविक विविधता के बारे में शिक्षित करने के लिए शैक्षिक कार्यक्रमों और परस्पर संवादात्मक सत्रों की मेजबानी की एवं वाद-विवाद प्रतियोगिता का भी आयोजन किया गया।

5 जून, 2024 को विश्व पर्यावरण दिवस

केंद्र द्वारा विश्व पर्यावरण दिवस वृहद् स्तर पर मनाया गया, जिसमें बड़ी संख्या में विद्यार्थी, स्थानीय निवासी, महिला स्वयं सहायता समूह की सदस्य और अल्मोड़ा की जानी-मानी हस्तियाँ शामिल हुईं। गतिविधियों में पर्यावरण के अनुकूल पहल, पर्यावरण जागरूकता अभियान और संधारणीय जीवन पद्धतियों पर चर्चाएँ शामिल थीं। इस कार्यक्रम में पद्मश्री डॉ. ललित पांडे मुख्य अतिथि और मुख्य वक्ता थे। सभी कार्यक्रम जलवायु परिवर्तन और नवीकरणीय ऊर्जा जैसे महत्वपूर्ण विषयों के आस-पास केंद्रित थे।

मानसखण्ड विज्ञान केंद्र नए शिविरों और परियोजनाओं की योजना बनाने और उन्हें लागू करने के लिए प्रतिबद्ध है, एवं केंद्र पूरे क्षेत्र में विज्ञान शिक्षा और पहुंच को आगे बढ़ाने में उल्लेखनीय प्रगति कर रहा है। इसके प्रयासों से स्थानीय समुदाय में विज्ञान के प्रति अधिक समझ और रुचि विकसित हो रही है एवं भविष्य में यह

केंद्र क्षेत्र के सतत् विकास में एक महत्वपूर्ण योगदान निभाएगा। इस दौरान केंद्र में अनेक वैज्ञानिकों एवं बुद्धिजीवियों द्वारा भी भ्रमण एवं निरीक्षण किया गया। दिनांक 15 अप्रैल 2024 को यूकॉस्ट के महानिदेशक प्रो. (डॉ.) दुर्गेश पंत द्वारा केंद्र का भ्रमण एवं निरीक्षण किया गया। निरीक्षण का उद्देश्य सुविधाओं की वर्तमान स्थिति, चल रहे कार्यक्रमों, संसाधन प्रबंधन और यूकॉस्ट दिशा निर्देशों के अनुपालन का आंकलन करना था। डॉ. पंत ने कर्मचारियों के साथ उनकी भूमिकाओं, चुनौतियों और सुधार के सुझावों को समझने के लिए चर्चा भी की। उन्होंने कार्यशालाओं, प्रशिक्षण सत्रों और आउटरीच गतिविधियों सहित विज्ञान केंद्र के शैक्षिक कार्यक्रमों का भी अवलोकन किया।

डॉ. पंत ने दीर्घाओं, प्रयोगशालाओं, सभागार और बाहरी स्थानों सहित सुविधाओं का गहन निरीक्षण किया। उन्होंने साइंस पार्क में चल रहे निर्माण कार्य की प्रगति का भी निरीक्षण किया और कुछ बदलावों का सुझाव दिया। इस अवसर पर उनके द्वारा नवप्रवर्तन केंद्र के विवरणिका का भी विमोचन किया गया। उन्होंने वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी एवं केन्द्र प्रभारी डॉ. नवीन चन्द्र जोशी को आवश्यक निर्देश दिये तथा मानसखण्ड विज्ञान केन्द्र की समग्र प्रगति पर संतोष व्यक्त किया।

यूकॉस्ट के संयुक्त निदेशक डॉ. देवी प्रसाद उनियाल द्वारा भी 3 एवं 4 मई 2024 को केंद्र का दौरा किया गया। उन्होंने भी मानसखण्ड विज्ञान केंद्र की विभिन्न गतिविधियों का निरीक्षण किया एवं उन्होंने साइंस पार्क में ब्रिडकुल द्वारा किये जा रहे कार्यो का भी अवलोकन किया एवं सम्बंधित अधिकारियों को आवश्यक दिशा निर्देश दिए। उन्होंने मानसखंड विज्ञान केंद्र के समस्त कर्मचारियों की भी एक बैठक ली तथा केंद्र की गतिविधियों एवं प्रगति की विवेचना की गयी। उनके द्वारा ग्रीष्मकालीन विज्ञान कैंप हेतु आवश्यक दिशा निर्देश भी दिए गए एवं कई महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा की गई।

उत्तराखण्ड @ 25 आदर्श चम्पावत

उत्तराखण्ड को देश का एक श्रेष्ठ और अग्रणी राज्य बनाने के लिए राज्य के यशस्वी मुख्यमंत्री श्री पुष्कर सिंह धामी जी द्वारा बोधिसत्व विचार शृंखला के माध्यम से उत्तराखण्ड@25 की परिकल्पना की गयी। इसके लिए चम्पावत जिले को उसकी भौगोलिक पृष्ठ भूमि के आधार आदर्श जनपद के रूप में विकसित करने के लिए चयन किया गया, जिसके लिए उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद (यूकॉस्ट), देहरादून को नोडल एजेन्सी नामित किया गया है। यूकॉस्ट द्वारा चम्पावत जनपद में राज्य के रेखीय विभागों, केन्द्रीय संस्थानों, स्वयं सहायता समूहों एवं एन0जी0ओ0 के साथ समन्वय स्थापित कर ग्रामीण आजीविका, विज्ञान के प्रचार-प्रसार के क्षेत्र में कार्य किये जा रहे हैं-

1. महिला प्रौद्योगिकी केन्द्र की स्थापना

यूकॉस्ट देहरादून द्वारा चम्पावत जनपद में प्रथम महिला प्रौद्योगिकी केन्द्र की स्थापना किया जाना प्रस्तावित है। उक्त महिला प्रौद्योगिकी केन्द्र की स्थापना का उद्देश्य महिलाओं को विभिन्न प्रौद्यागिकियों में प्रशिक्षित करने के साथ ही रोजगार के नये अवसर भी उपलब्ध करवाना है। यूकॉस्ट द्वारा हथकरघा से संबंधित बेसिक एवं एडवांस विभिन्न मशीनों को महिला प्रौद्योगिकी केन्द्र, खर्ककार्की में स्थापित किया गया है। भविष्य में महिला प्रौद्योगिकी केन्द्र में अलग-अलग प्रौद्योगिकियों क्रमशः ड्रोन प्रौद्योगिकी, डिजिटल प्रौद्योगिकी, ए0आई0 प्रौद्योगिकी इत्यादि को स्थापित किया जाना प्रस्तावित है, जिससे चम्पावत की महिलाओं को विभिन्न प्रौद्योगिकी के बारे में प्रशिक्षित किये जाने के साथ ही रोजगार के नये अवसर भी उपलब्ध होंगे। साथ ही भविष्य में जनपद के प्रत्येक ब्लॉक में महिलाओं को प्रशिक्षित करने एवं रोजगार के नये अवसर उपलब्ध करवाने के लिए महिला प्रौद्योगिकी केन्द्र की स्थापना किया जाना प्रस्तावित है।

2. उद्यमिता विकास कार्यक्रम के माध्यम से ऐपण आर्ट एवं हथकरघा का प्रशिक्षण

यूकॉस्ट, देहरादून एवं निर्मला सोशल रिसर्च एंड डेवलपमेंट सोसाइटी, हल्द्वानी के संयुक्त तत्वाधान में दिनांक 6 मई से दिनांक 20 मई 2024 को 15 दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन किया गया। उक्त प्रशिक्षण कार्यक्रम में चम्पावत ब्लॉक के विभिन्न गाँवों से 30-35 चयनित महिलाओं के द्वारा प्रतिभाग किया गया है। उक्त प्रशिक्षण कार्यक्रम के माध्यम से महिलाओं को ऐपण आर्ट के बारे में प्रशिक्षित किया जायेगा, साथ ही जूट के विभिन्न उत्पादों जैसे बैग, फोल्डर इत्यादि के बारे में प्रशिक्षित किया जायेगा। भविष्य में चम्पावत जनपद में कुल 500 महिलाओं को प्रशिक्षित किया जाना प्रस्तावित है।

3. पिरूल से ब्रिकेटस बनाने हेतु इकाई की स्थापना

यूकॉस्ट देहरादून एवं आई0आई0पी0 देहरादून के संयुक्त तत्वाधान में पिरूल से ब्रिकेटस बनाने की इकाई की स्थापना भिगंराड़ा गाँव, पाटी ब्लॉक चम्पावत में किया जाना प्रस्तावित है। वर्तमान में क्षेत्र की विभिन्न स्वयं सहायता समूहों से कुल 50 महिलाओं के द्वारा पिरूल एकत्रित किया जा रहा है और माह जुलाई 2024 में पिरूल आधारित 50 किलो0 प्रति घंटा क्षमता वाली ब्रिकेटिंग इकाई की स्थापना किया जाना प्रस्तावित है। इस इकाई के माध्यम से पिरूल से ब्रिकेटस बनाये जायेगें, जिससे क्षेत्र की महिलाओं को रोजगार के नये अवसर उपलब्ध होंगे। साथ ही ब्रिकेट से चलने वाले 500 उन्नत चूल्हों का प्रयोग ग्रामीण घरों में ऊर्जा संरक्षण एवं पर्यावरण संरक्षण के लिए कराया जायेगा।

4. यूकास्ट द्वारा चंपावत जनपद में महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने के लिए गैनोडर्मा मशरूम की खेती वैज्ञानिक तरीके से करायी जायेगी

इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाना और उनकी आय में वृद्धि करना है। जिसके प्रथम चरण में 50 महिलाओं को चयनित कर उन्हें मेडिसिनल मशरूम गैनोडर्मा के बारे में प्रशिक्षित करने के बाद द्वितीय चरण में प्रत्येक महिला को यूकॉस्ट द्वारा 50-50 बैग गैनोडर्मा मशरूम के खेती करने के लिए दिये जायेंगे, जिससे महिलाओं के लिए रोजगार के नये अवसर उपलब्ध होंगे। इस कार्य में तकनीकी सहयोग हैन एग्रोकेयर, देहरादून के द्वारा किया जायेगा।

5. माँ पूर्णागिरि मंदिर में चढावे के फूलों से धूप, सुगन्धित तेल बनाये जाने हेतु प्रसंस्करण इकाई की स्थापना

दिनांक 1 मई 2024 को यूकॉस्ट देहरादून एवं सीमैप लखनऊ की संयुक्त टीम ने माँ पूर्णागिरि मन्दिर क्षेत्र का भ्रमण किया और स्थानीय फूल विक्रेताओं से वार्ता की। भ्रमण का उद्देश्य क्षेत्र में औषधि एवं सगंध पौधों का उत्पादन और मन्दिर में चढावे के फूलों से धूप, सुगन्धित तेल इत्यादि का निर्माण किया जाना है।

साथ ही एरोमा मिशन के अन्तर्गत महिला समूहों को गुलाब, गुडहल, लैमनग्रास, जिरेनियम, रोजमैरी की पौध उपलब्ध करवायी जायेगी और भविष्य में क्षेत्र में एक प्रसंस्करण इकाई की स्थापना भी की जायेगी, जिससे महिलाओं के लिए रोजगार के नये अवसर उपलब्ध होंगे।

6. चम्पावत जनपद में एरोमा पार्क की स्थापना

चम्पावत जनपद के मुडियानी गॉव में यूकॉस्ट देहरादून द्वारा एक एरोमा पार्क की स्थापना किया जाना प्रस्तावित है। उक्त पार्क के लिए भूमि जिला प्रशासन, चम्पावत द्वारा यूकॉस्ट को दी जायेगी। उक्त कार्य हेतु तकनीकी सहयोग सीमैप लखनऊ के द्वारा दिया जायेगा। उक्त पार्क में एरोमैटिक पौधों की नर्सरी बनाने के साथ ही एरोमैटिक पौधों की खेती भी की जायेगी और एक प्रसंस्करण इकाई की स्थापना भी की जानी प्रस्तावित है। साथ ही पार्क के माध्यम से भविष्य में चम्पावत जनपद में भ्रमण के लिए आने वाले यात्रियो को एरोमैटिक पौधों की जानकारी मिल सकेगी।

उक्त पार्क का संचालन महिला स्वयं सहायता समूहों के द्वारा किया जायेगा। वर्तमान में यूकॉस्ट द्वारा नरसिंह डांडा एवं पुनेठी गाँवों में चयनित किसानों को एरोमैटिक पौधों जिरेनियम एवं रोजमैरी के 30000 पौधे वितरित किये गये। दिनांक 2 मई 2024 को नरसिंह डांडा गाँव में यूकॉस्ट देहरादून एवं सीमैप लखनऊ के वैज्ञानिकों के द्वारा प्रशिक्षण सह जागरूकता कार्यक्रम का आयोजन किया गया और किसानों को सगंध पौधों जिरेनियम, रोजमैरी, लेमनग्रास इत्यादि से बनाये जाने वाले उत्पादों के बारे में जानकारी दी गयी।

7. उत्तराखण्ड@25 आदर्श चम्पावत के अन्तर्गत चम्पावत जनपद के सिप्टी गॉव में यूकॉस्ट द्वारा टैक्नोलाजी रिर्सोस सेन्टर की स्थापना

उत्तराखण्ड@25 आदर्श चम्पावत परियोजना के अन्तर्गत चम्पावत जनपद के सिप्टी गाँव में यूकॉस्ट एवं चैतन्य मौनालय एवं कृषि सेवा समिति, हल्द्वानी के संयुक्त तत्वाधान में एक टैक्नोलॉजी रिर्सोस सेन्टर की स्थापना की गयी। इस अवसर पर प्रो0 दुर्गेश पंत, महानिदेशक यूकॉस्ट ने ऑनलाइन माध्यम से जुड़कर कहा कि इस टैक्नोलाजी रिर्सोस सेन्टर की स्थापना का उद्देश्य महिलाओं को विभिन्न प्रौद्योगिकियों के बारे में जानकारी देने के साथ ही प्रशिक्षित

करना है। उन्होने कहा कि वर्तमान में इस केन्द्र में महिलाओं को प्रशिक्षित करने के लिए ऐपण एवं हथकरघा से संबंधित प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन किया जा रहा है। जिसमें महिलाओं को ऐपण एवं जूट के बैग बनाने के लिए प्रशिक्षित किया जायेगा और स्वरोजगार के नये अवसर उपलब्ध हो सकेगे। इस अवसर पर श्री देवेन्द्र सिंह, समन्वयक, यूकॉस्ट ने कहा कि यूकॉस्ट द्वारा चम्पावत जनपद में महिलाओं की आजीविका में सुधार करने के लिए महिला प्रौद्योगिकी केन्द्र की स्थापना के साथ ही अन्य प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया जा रहा है। इस अवसर पर कार्यक्रम में उपस्थित श्री संजय जोशी अध्यक्ष चैतन्य मौनालय एवं कृषि सेवा समिति, हल्द्वानी ने कहा कि यूकॉस्ट द्वारा महिलाओं को स्वरोजगार से जोड़ने के लिए इस केन्द्र की स्थापना की जा रही है। इस अवसर पर सिप्टी सहित अन्य गाँवों की 50 से 60 महिलाओं के द्वारा प्रतिभाग किया गया।

8. विश्व मधुमक्खी दिवस-2024

उत्तराखंड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद (यूकॉस्ट) देहरादून और चैतन्य मौनालय एवं कृषि सेवा समिति, हल्द्वानी के संयुक्त तत्वाधान में दिनांक 20 मई 2024 को विश्व मधुमक्खी

दिवस के अवसर पर राजकीय बालिका इण्टर काजेल चम्पावत में एक कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस कार्यशाला का मुख्य उद्देश्य मधुमक्खियों के संरक्षण और परागण के महत्व के बारे में किसानों, युवाओं एवं विद्यार्थियों में जागरूकता फैलाना था। इस अवसर श्री संजय जोशी, अध्यक्ष, चैतन्य मौनालय एवं कृषि सेवा समिति, हल्द्वानी के द्वारा कार्यक्रम में उपस्थित अतिथियों एवं प्रतिभागियों का स्वागत किया गया और उन्होंने कहा कि मधुमक्खियां केवल शहद ही नहीं, बल्कि हमारी खाद्य शृंखला के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। श्री देवेंद्र सिंह, समन्वयक, यूकॉस्ट, देहरादून के द्वारा कार्यक्रम में उपस्थित लोगों को यूकॉस्ट द्वारा उत्तराखंड@25 आदर्श चंपावत परियोजना के अंतर्गत किए जा रहे विविध कार्यों के बारे में जानकारी दी। साथ ही उन्होंने प्रतिभागियों को विश्व मुधमक्खी दिवस के महत्व एवं उद्देश्यों के बारे में विस्तृत जानकारी दी। उनके द्वारा प्रतिभागियों को विश्व मधुमक्खी दिवस के इस वर्ष के विषय “Bee Engaged With Youth” के बारे में भी जानकारी दी गयी। इस अवसर पर प्रो0 दुर्गेश पंत, महानिदेशक यूकॉस्ट द्वारा ऑनलाइन माध्यम से जुड़कर कहा कि मधुमक्खियां हमारे पारिस्थितिकी तंत्र का अनिवार्य हिस्सा हैं। इनके बिना हमारा खाद्य उत्पादन और जैव विविधता दोनों ही संकट में पड़ सकते हैं। मधुमक्खी पालन के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण करने के साथ ही किसानों को रोजगार के भी नये अवसर उपलब्ध होगें। जिला उद्यान अधिकारी श्री टी0एन0पांडे के द्वारा उद्यान विभाग में चल रहे मधुमक्खी पालन से संबंधित विभिन्न कार्यक्रमों के बारे में जानकारी दी गई।

कार्यशाला में उपस्थित विशेषज्ञों श्री बृजपाल सिंह नेगी एवं श्री हरीश जोशी के द्वारा उपस्थित किसानों एवं छात्राओं को मधुमक्खी पालन एवं विभिन्न मधुमक्खी पालन संयंत्रों के बारे में जानकारी दी गई। कार्यक्रम में विभिन्न गांव के 15 से 20 किसानों के द्वारा प्रतिभाग किया गया और किसानों को उनके मधुमक्खी पालन के क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य के लिए पुरस्कार भी दिया गया। प्रभारी प्रधानाचार्या श्रीमती आशा टम्टा के द्वारा धन्यवाद देते हुए कहा कि यूकास्ट द्वारा भविष्य में भी इसी प्रकार की ज्ञानवर्धक कार्यशालाओं का आयोजन करवाने के लिए निवेदन किया गया। इस अवसर पर 80 से अधिक छात्राओं के द्वारा प्रतिभाग किया गया। इस कार्यक्रम के सफल आयोजन में हिमवत्स संस्था के द्वारा भी सहयोग किया गया। कार्यक्रम में नवीन नेगी सहित विभिन्न गांव के किसानो के द्वारा प्रतिभाग किया गया।

9. विश्व जैवप्रौद्योगिकी दिवस-2024

उत्तराखंड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् (यूकॉस्ट), देहरादून के उत्प्रेरण एवं सहयोग तथा रुरल एन्वायरमेंटल एंड एजुकेशनल डेवलपमेंट सोसायटी, रीड्स द्वारा आयोजित अंतरराष्ट्रीय जैव विविधता दिवस 22 मई 2024 के उपलक्ष्य में राजकीय बालिका इंटर कालेज, चंपावत में एक दिवसीय कार्यशाला का आयोजन किया गया, कार्यशाला में चंपावत क्षेत्र के सैकड़ों छात्रों द्वारा प्रतिभाग किया गया।

विद्यालय की प्रभारी प्रधानाचार्या चंद्रकला टम्टा की अध्यक्षता में आयोजित कार्यशाला में मुख्य वक्ता डॉ. बी डी सुतेडी, सेवा निवृत प्राचार्य तथा डॉ. रजनी पंत, कृषि विज्ञान केंद्र लोहाघाट ने जैव विविधता संरक्षण विषय पर विस्तार से छात्रों को जानकारी दी, डॉ. सुतेडी ने जैव विविधता की जानकारी देने के साथ-साथ उसके समय और व्यक्तिगत जीवन में उपयोग के बारे में जागरूक होना आवश्यक बताया और कहा कि अधिक उत्पादन पैदा करने की होड़ में हमने पारंपरिक पद्धति को छोड़ दिया है, जो की चिंताजनक है, हम नया कुछ जरुर अपनाएं परंतु पारंपरिक पद्धति को न छोड़ें। कृषि विज्ञान केन्द्र की वैज्ञानिक डॉ. रजनी पंत ने जंतुओं और वनस्पतियों के आपसी सम्बन्ध के बारे में बताते हुए कहा की खाद्य श्रृंखला के महत्व को समझाया और आधुनिक खेती आदि कैसे हो, की जानकारी दी, रीड्स के इंद्रेश लोहनी ने सभी आगंतुकों और यूकॉस्ट का आभार व्यक्त किया की जिले में ऐसी कार्यशाला आयोजित की जा रही है, जिसका लाभ छात्रों को मिल रहा है और जिला आदर्श जिला बनने की ओर को आगे बढ़ रहा है, इस हेतु महानिदेशक प्रो. दुर्गेश पंत जी का आभार। यूकॉस्ट समन्वयक देवेंद्र सिंह ने विशेष रूप से चंपावत जिले में चल रहे विभिन्न कार्यक्रमों की जानकारी दी, जिनमें प्रमुख रूप से महिला प्रौद्योगिकी केंद्र की स्थापना, गैनोडर्मा मशरूम का उत्पादन, जूट बैग का निर्माण और पिरुल से ब्रिकेट्स निर्माण प्रमुख हैं। रीड्स समन्वयक कुसुम थ्वाल ने जैव विविधता पर कविता के माध्यम से विषय पर प्रकाश डाला तथा किरन गहतोड़ी ने सभी का आभार व्यक्त किया, डॉ. एम पी जोशी ने जैव विविधता दिवस मनाने के कारण तथा जरूरत पर बल दिया। कार्यशाला में चम्पावत के विभिन्न विद्यालयों के छात्र एवं छात्राओं के द्वारा प्रतिभाग किया गया।

10. उत्तराखण्ड/25 आदर्श चम्पावत समीक्षा बैठक

माननीय मुख्यमंत्री जी की अध्यक्षता में दिनांक 13 जून 2024 को राज्य सचिवालय में चंपावत को मॉडल जिला बनाने के लिए चल रही कार्य योजना और परियोजनाओं की समीक्षा की गयी। इस अवसर पर मुख्यमंत्री पुष्कर सिंह धामी ने कहा है कि उत्तराखंड को एक मॉडल राज्य बनाने के प्रयास में चम्पावत को एक मॉडल जिले के रूप में विकसित किया जा रहा है।

उन्होंने कहा कि चम्पावत जिले में तराई, मैदान, भाबर और पहाड़ों की सभी भौगोलिक विशेषताएं मौजूद हैं। बैठक में मुख्यमंत्री जी ने निर्देश दिया कि सभी परियोजनाओं में पारिस्थितिकी और विकास के बीच समन्वय बनाया जाये। उन्होंने कहा कि परियोजनाओं को समयबद्ध तरीके से पूरा किया जाना चाहिए और यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि प्रयासों के परिणाम जमीन पर दिखाई दें। मुख्यमंत्री जी ने कहा कि मॉडल चंपावत योजना के लिए नोडल अधिकारियों को जिला स्तरीय अधिकारियों के साथ नियमित बैठकें करनी चाहिए। उन्होंने कहा कि परियोजनाओं में स्थानीय लोगों के सुझाव भी लिये जाने चाहिए।

मुख्यमंत्री जी ने कहा कि चंपावत में धार्मिक, आध्यात्मिक और साहसिक पर्यटन के क्षेत्र में अपार संभावनाएं हैं। उन्होंने कहा कि चम्पावत में तीर्थयात्रियों और पर्यटकों के तीन से चार दिन के प्रवास के लिए जिले में सर्किट विकसित किये जाने चाहिए। मुख्यमंत्री जी ने कहा कि पूर्णागिरि मंदिर में तीर्थयात्रियों की संख्या में वृद्धि को देखते हुए सुविधाएं विकसित की जानी चाहिए। मुख्यमंत्री जी ने चंपावत में शारदा कॉरिडोर और आईएसबीटी के विस्तार की जरूरत पर भी जोर दिया।

अधिकारियों ने मुख्यमंत्री जी को बताया कि जिले में पर्यटन, कृषि, बागवानी, स्वास्थ्य सेवा, शिक्षा और दुग्ध उत्पादों को प्रोत्साहित करने के लिए एक विस्तृत योजना पर काम चल रहा है। जिले में लघु, मध्यम और दीर्घकालिक योजनाओं पर काम चल रहा है। जिले में साहसिक पर्यटन, डेस्टिनेशन वेडिंग, कीवी उत्पादन और दुग्ध उत्पादन को बढ़ावा देने पर काम चल रहा है।

चंपावत के जिलाधिकारी श्री नवनीत पांडे ने कहा कि यह सुनिश्चित करने पर विशेष जोर दिया जा रहा है कि केंद्र और राज्य सरकार की सामाजिक कल्याण योजनाओं का लाभ जिले के प्रत्येक पात्र व्यक्ति तक पहुंचे। उन्होंने कहा कि ग्रामीण क्षेत्रों से शहर की ओर बढ़ते पलायन को देखते हुए टाउन प्लानिंग पर विशेष फोकस किया जा रहा है।

हिमालयी विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी अकादमी का उद्घाटन

हिमालयन एकेडमी ऑफ साइंस एंड टेक्नोलॉजी (हास्ट) पर्वत-विशिष्ट अनुसंधान को बढ़ावा देने के लिए एक गतिशील मंच के रूप में स्थापित किया गया है, जो विज्ञान और समाज, ग्रामीण प्रौद्योगिकी और विज्ञान प्रौद्योगिकी इंजीनियरिंग और गणित (स्टेम) शिक्षा के अंतर्संबंध पर जोर देगा। इसके प्राथमिक उद्देश्यों में शोधकर्ताओं के बीच वैज्ञानिक जानकारी के आदान-प्रदान को बढ़ावा देना और समाज के कल्याण के लिए हरित प्रौद्योगिकियों को बढ़ावा देना शामिल है। बहु-विषयक और अंतर-विषयक अनुसंधान को प्रोत्साहित करके, हास्ट का लक्ष्य युवा पीढ़ी को शामिल करना, उन्हें पर्वतीय वातावरण की अनूठी चुनौतियों और अवसरों के प्रति संवेदनशील बनाना और उन्हें सतत विकास में योगदान देने वाले कैरियर पथों की ओर मार्गदर्शन करना है। अकादमी हिमालयी क्षेत्र में शोधकर्ताओं के वैज्ञानिक योगदान को दृश्यता और मान्यता देने का भी प्रयास करेगी, विभिन्न सामाजिक क्षेत्रों तक पहुंचने के लिए विभिन्न मीडिया के माध्यम से उनके काम का प्रसार करेगी। इसके अलावा, हास्ट विश्व के शीर्ष विज्ञान अकादमियों और संस्थानों के साथ अकादमिक आदान-प्रदान की सुविधा प्रदान करते हुए पेशेवरों का एक मजबूत तंत्र विकसित करेगी।

अनुसंधान को बढ़ावा देने में अपनी भूमिका के अलावा, अकादमी विशेष रूप से पर्वतीय क्षेत्रों में मानव कल्याण को बढ़ाने के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी का उपयोग करने पर केंद्रित बैठकों, सेमिनारों, सम्मेलनों और विषयगत चर्चाओं के आयोजन के लिए प्रतिबद्ध है। यह अपने प्रयासों को विजन 2047 और अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों जैसे बड़े राष्ट्रीय लक्ष्यों के साथ संरेखित करता है। अकादमी पहाड़ों में जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाने, पर्वतीय समुदायों के बीच गर्व की भावना को बढ़ावा देने के लिए कम लागत वाली, पर्यावरण के अनुकूल ग्रामीण प्रौद्योगिकियों पर अनुसंधान को प्राथमिकता देगी। अकादमी पर्यावरण संरक्षण और सतत विकास के लिए महत्वपूर्ण नवीन अनुसंधान के लिए संसाधन प्रदान करके युवा शोधकर्ताओं का समर्थन करेगी। यह एक विशेषज्ञ समूह (थिंक टैंक) के रूप में भी कार्य करती है, जिसका मुख्य उद्देश्य पारंपरिक ज्ञान और स्थानीय संस्कृति को संरक्षित करते हुए विज्ञान शिक्षा को बढ़ावा देना है। अपनी गतिविधियों को बनाए रखने के लिए, अकादमी एक संस्थागत पुरस्कार प्रणाली के माध्यम से विज्ञान और प्रौद्योगिकी अनुसंधान में उत्कृष्टता को मान्यता देते हुए फेलोशिप, छात्रवृत्ति और अनुसंधान अनुदान के लिए वित्तीय संसाधन भी प्रदान करेगी। इसके अतिरिक्त, यह स्टेम शिक्षा को बढ़ाने के लिए शैक्षणिक संस्थानों को विशेषज्ञ और अकादमिक सहायता प्रदान करेगी और हिमालयी राज्यों को लाभ पहुंचाने वाली नीतियों की वकालत करेगी।

हास्ट को बनाने का एक उद्देश्य राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी के सामानांतर एक ऐसा संस्थान खड़ा करना है जो हिमालयी क्षेत्र में राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी के समानांतर अकादमी के रूप में काम करे, एवं पर्वतीय पर्यावरण की अनूठी चुनौतियों और अवसरों के अनुरूप नवाचार और वैज्ञानिक अनुसंधान को बढ़ावा देने पर ध्यान केंद्रित करे। हास्ट उच्च ऊंचाई वाली चिकित्सा, सतत विकास, जलवायु परिवर्तन अनुकूलन और जैव विविधता संरक्षण जैसे अंत: विषय अनुसंधान क्षेत्रों में विशेषज्ञ होगी। स्थानीय और अंतर्राष्ट्रीय विशेषज्ञों के साथ सहयोग करके, अकादमी उन्नत शिक्षा और प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रदान करेगी, स्वदेशी ज्ञान एकीकरण का समर्थन करेगी और उच्च ऊंचाई वाले संदर्भों के अनुरूप प्रौद्योगिकी हस्तांतरण की सुविधा प्रदान करेगी। अकादमी सहक्रियात्मक प्रयासों के माध्यम से, क्षेत्रीय वैज्ञानिक क्षमता, पारिस्थितिक स्थिरता और सामाजिक-आर्थिक विकास को बढ़ावा देगी एवं एक मजबूत वैज्ञानिक समुदाय का निर्माण करेगी जो हिमालयी परिप्रेक्ष्य में स्थानीय और वैश्विक दोनों मुद्दों को संबोधित करेगा।

उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में `गोठ पद्धति' की परम्परागत जैविक कृषि में भूमिका

देवीदत्त चौनियाल

जैविक कृषि फसल उगाने की ऐसी तकनीक है जिसमें कृषि भूमि में रसायनिकों, कृत्रिम उर्वरकों एवं कीटनाशक रसायनों का उपयोग नहीं किया जाता है। जैविक कृषि में प्राकृतिक उर्वरकों का ही उपयोग किया जाता है। प्राकृतिक उर्वरक ऐसे पदार्थ होते हैं जिनको कृषि भूमि एवं मिट्टी में डालने से मिट्टी की उर्वरा शक्ति में वृद्धि होती है तथा पौधों एवं उत्पादन में भी वृद्धि होती है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि रसायन मुक्त कृषि ही जैविक कृषि कहलाती है।

वर्तमान समय में स्वस्थ जीवन के लिये रासायन मुक्त कृषि से उत्पादित भोज्य पदार्थ ही मानव जीवन के लिये उपयोगी है। भारत में सतत् कृषि के राष्ट्रीय मिशन, परम्परागत कृषि विकास योजना एवं मिशन आर्गनिक वैल्यू चैन विकास योजनाओं के अन्तर्गत जैविक एवं प्राकृतिक कृषि को प्रोत्साहित किया जा रहा है। जैविक कृषि के लिये जैविक खाद का होना आवश्यक होता है। जैविक खादों में प्राकृतिक रूप से उत्पादित गोबर की खाद ही प्रमुख है।

प्रस्तुत लेख का उद्देश्य उत्तराखण्ड राज्य के पर्वतीय क्षेत्रों में परम्परागत रूप से जैविक कृषि पद्धति 'गोठ पद्धति' का विवरण प्रस्तुत किया गया है।

उत्तराखण्ड हिमालय में स्थित एक पर्वतीय राज्य है। तराई-भाबर (300 मीटर) से प्रारम्भ होकर हिमाच्छादित पर्वत श्रृंखलाओं (7500 मीटर की ऊंचाई तक) फैला हुआ है। स्वावलम्बन भिन्नता एवं जलवायु दशाओं में स्थान-स्थान पर भिन्नता के कारण यहाँ भौतिक, सांस्कृतिक, सामाजिक एवं न्यायायिक संख्या में घाटी दर घाटी में भिन्नतायें मिलती है। पर्वतीय जनपदों में स्थानीय लोगों का परम्परागत व्यवसाय मुख्यत: आत्मनिर्भर कृषि तथा द्वितीयक व्यवसाय पशुपालन रहा है। उच्चता के आधार पर कृषि फसलों के उत्पादन, प्रकार, फसल तक फसल सहसंगठन तथा उगाने के काल में अन्तर स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। प्रारम्भ से ही जीविका के अन्य साधन उपलब्ध नहीं होने के कारण पर्वतीय निवासियों ने पर्यावरण के साथ समायोजन कर पर्वतीय ढालों पर सीढ़ीदार खेत बनाकर तथा कठोर परिश्रम से अपनी जीविका का उर्पाजन किया जाता रहा है।

कृषि के साथ-साथ पशुपालन पर्वतीय निवासियों का द्वितीयक व्यवसाय है। कृषि और पशुपालन एक दूसरे के पूरक माने जाते हैं। बिना पशुपालन के कृषि सही और बिना कृषि के पशुपालन सम्भव नहीं होता है।

मुख्य विषय पर आने से पूर्व यहाँ की परम्परागत कृषि पद्धति को समझना भी अति आवश्यक है। सामान्यत: गढ़वाल एवं कुमांऊ मण्डलों में कृषि भूमि को 'सार' कहा जाता है। सार ग्राम के अधिवासों की बसाव स्थिति के आधार पर दो भागों में विभाजित होती है।

यदि ग्रामीण अधिवास कृषि भूमि के मध्य में स्थित है और कृषि भूमि अधिवासों के दायें एवं बायीं ओर स्थित है तो उसे वल्ली (बायें) व पल्ली (दायें) सार के नाम से जाना जाता है। इसी प्रकार यदि कृषि भूमि अधिवासों के ऊपर एवं नीचे फैली है तो उसी स्थानीय भाषा में मल्ली (ऊपरी) और तल्ली (निचली) सार के नाम से जाना जाता है।

इन्हीं दो 'सारों' में रबी एवं खरीफ ऋतुओं के अनुसार फसल

चक्र, फसल सह संगठन तथा फसलों का उत्पादन क्रमशः किया जाता है। उर्वरक शक्ति एवं उत्पादकता के आधार पर कृषि भूमि को तलाव (उत्तम) उपरांव (मध्यम) एवं कटील (निम्न) श्रेणियों में बांटा जा सकता है। गाढ़-गधेरों या नदी के किनारों की सिंचित भूमि को 'सेरा' या 'तया' या बगड़ के नाम से जाना जाता है। 'तलाव' भूमि सिंचित होती है इसलिये इसमें साल भर में दो फसले उगाई जाती हैं।

मध्य ढालों एवं अधिक ऊँचाई वाले स्थानों पर स्थित सार में साल भर में एक ही फसल उगाई जाती हैं। खरीफ के मौसम में दोनों सारों में फसल उगाई जाती है। एक सार में झंगोरा, सूखा धान (साटी) एवं दालें (सोयाबीन, भट्ट) तथा दूसरी सार में मंडुवा (कोदा), गहत-भट्ट) रोपाई वाला धान उगाया जाता है। झंगोरा और साटी वाले सार में फसल कटने के बाद (सितम्बर) इस सार में गेहूं की फसल बोई जाती है जबकि शीत काल में दूसरी सार (भटुआ) के लिए खाली परती छोड़ दिया जाता है।

कृषि एवं पशुपालन साथ-साथ चलने वाले व्यवसाय हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में प्रत्येक परिवार में सामान्यतः गाय,बैल, भैंस, भेड़-बकरियां हैं। यह क्षमता के अनुसार रखे जाते हैं। कृषि में खाद के लिये पशुओं को रखना भी अनिवार्य हो जाता है। पशुओं की सुरक्षा एवं देख-रेख का विशेष ध्यान रखा जाता है। जानवरों को मानव अधिवासों से कुछ दूर सुविधाजनक स्थान-गौशालों या छानियों या मरोड़ा में रखा जाता है। गर्मी, सर्दी एवं बरसात में जानवरों का विशेष ध्यान रखा जाता है। ब्रिटिश काल से पूर्व जानवरों को मानव अधिवासों के साथ भूतल(उबरा) पर रखा जाता था परन्तु तत्पश्चात इन्हें मानव अधिवासों से कुछ दूरी पर गौशालाओं में रखा जाता है।

गोठ प्रथा

गोठ प्रथा का जैविक खेती से अति निकट का सम्बन्ध है। कृषि प्रधान पर्वतीय भागों में कृषि उत्पादन में वृद्धि के लिये गोठ प्रथा अपना विशेष स्थान रखती है। गोठ प्रथा में कृषि, पशुपालन एवं परम्परागत जैविक खेती को समझना आवश्यक है। ग्रीष्म एवं वर्षा काल में गोशालाओं में गर्मी एवं कीचड़ अधिक होने के कारण जानवरों को गोशालाओं से बाहर निकट के बाड़े में बांधने का रिवाज है। कुछ लोग ग्रीष्म काल में अपने जानवरों (विशेषकर भैसों) को लेकर 3000 मी0 से अधिक ऊँचाई पर बुग्यालों या डांडों में चले जाते हैं तथा तीन माह (जून, जुलाई तथा अगस्त) तक वहाँ पशुओं को चराने के बाद पुनः अपने स्थाई निवासों में आ जाते हैं जो लोग डांडों में नहीं जाते हैं वे गाय-भैसों एवं भेड़-बकरियों को गोशालाओं के पास के खेतों में गोठ लगाकर खुले में बांध देते हैं। 'गोठ' एक प्रकार का रामेश्वर घास (हाथी घास) एवं रिगांल का बना हुआ छप्पर होता है जिसके हिस्सों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर लाया ले जाया जा सकता है। इसके पार्टस को स्थानीय भाषा में फड़ीका कहते हैं। भेड़-बकरियों की संख्या के आधार पर यह दो या चार पार्ट में होता है। इनको ऐसे ओढा जाता है कि उसके अन्दर भेड़-बकरियां तथा उसके बाहर खुले में गाय-बैलों को बांधा जाता है। जानवरों की रक्षा के लिये प्रत्येक परिवार से एक या दो व्यक्ति जंगली जानवरों से रक्षा करते हैं। गोठ एक प्रकार का अस्थाई चलायमान छप्पर होता है। खेतों में गोठ लगाने की एक परम्परागत प्रथा है जो पर्वतीय क्षेत्रों में जैविक खेती करने का एक उत्तम प्रकार की प्रथा है। यह प्रथा प्रमुख रूप से उत्तराखण्ड के पौड़ी, अल्मोड़ा तथा चमोली जनपदों में प्रमुखता से प्रचलित है।

जुलाई एवं अगस्त में गोशालाओं के समीप या जानवरों के बाड़े के निकट कीचड़ होने के कारण और गोशालाओं के अन्दर गर्मी होने के कारण लोग सार के किनारों पर स्थित कटील भूमि पर अपनी गोठ को स्थानान्तरित कर देते हैं। सितम्बर से पूर्व तक लोग कटील भूमि में अलग खेतों में गोठ लगाते हैं। इसके साथ ही गोशालाओं के निकट वाले खेत में मूली, तम्बाकू, राई एवं हरी सब्जियां बो देते हैं। कटील भूमि पर लघु आकार के खेतों जिनको स्थानीय भाषा में पुंगड़ा कहते हैं, में जानवरों के साथ गोठ लगाई जाती है। इससे मिट्टी की उर्वरा शक्ति बढ़ती है तथा फसलों का उत्पादन अच्छा होता है।

सितम्बर माह में जब खरीफ की फसल कटती है तो झंगोरा उगाने वाले खेतों में क्रमशः प्रत्येक परिवार अपने-अपने खेतों में जानवरों के साथ गोठ लगाते जाते हैं। अपनी गोठ के आकार के अनुसार प्रत्येक खेत में गोठ लगाई जाती है। प्रतिदिन जानवरों को जंगल से चराकर रात्रि में गोठ में बांध दिया जाता है। प्रतिदिन गोठ को प्रति खेत में स्थानान्तरित किया जाता है तथा पूरे सार में सितम्बर एवं अक्टूबर माह में रखा जाता है। शीत ऋतु प्रारम्भ होने के साथ ही पुनः गोठ को बन्द कर जानवरों को गौशाला में बांध दिया जाता है।

गोठ प्रथा को संचालित करना अत्यधिक कठिन एवं मेहनत का कार्य है। गाय-बकरियों के साथ निरन्तर खुले आसमान में रहकर जीविका के लिये कठोर परिश्रम करना पड़ता है। इससे समझा जा सकता है कि पहाड़ में खेती करना एवं फसलों का उत्पादन करना कितना अधिक श्रमशील है। चूंकि ग्राम के सभी लोग अपने-अपने खेतों में गोठ लगाते हैं इसलिए रात्रि में भय का वातावरण नहीं रहता है। प्रायः यह देखा गया है कि यह प्रथा उन

ग्रामों में सर्वाधिक है जहाँ पर पशुचारण व्यवसाय को सर्वाधिक महत्व दिया जाता है। यह प्रथा भी सदियों से चली आ रही है। पुरुष प्रधान परिवारों में पुरुष रात्रि में गोठ लगाते हैं जबकि महिला प्रधान परिवारों में महिलायें गोठ नहीं लगाती हैं। महिलायें घर पर ही बच्चों व परिवार के कार्य में सहयोग करती हैं तथा गौशालाओं में बधे जानवरों की देखभाल करती हैं। प्रश्न यह उठता है कि गोठ प्रथा चलाने का मूल कारण क्या है?

गोठ खेतों में लगाने का एक वैज्ञानिक कारण यह है कि खेतों में गायों व भेड़-बकरियों का गोबर और मल मूत्र पूरे खेत में फैला दिया जाता है जो मिट्टी की उर्वरा शक्ति को आगे बोई जाने वाली दो बार की फसलों के उत्पादन के लिये उपयुक्त होती है। उदाहरण के लिये गेहूँ (रवी की फसल) एवं तत्पश्चात मंडुवा (खरीफ की फसल)।

गोबर को खेत में फैला देने के बाद उसके ऊपर हल चलाकर कुछ समय के लिए दबा दिया जाता है। जब यह गोबर एवं मलमूत्र खेतों में मिट्टी के साथ मिश्रित हो जाता है तब मिट्टी उनसे उपयुक्त अवशोषण करती है जो कि खाद में विद्यमान रहते हैं। इस तरह की खाद में पाये जाने वाले प्रमुख तत्व नाइट्रोजन,फासफोरस, पोटेशियम, कैल्शियम तथा मैग्नेशियम के अतिरिक्त कुछ खनिज भी पशुओं के मल-मूत्र में विद्यमान रहते हैं। ये रासायनिक तत्व फसलों के पौधों को उगने व वृद्धि करने में तथा अधिक मात्रा में फसलों का उत्पादन करने में अतिसहायक होते हैं जो जैविक खेती करने का सबसे उत्तम पारम्परिक पद्धति है। चूंकि जीवन-यापन करने तथा अधिक मात्रा में फसलों का उत्पादन करने के लिये पर्वतीय क्षेत्रों के संघर्शशील किसान कई प्रकार के कृषि से सम्बन्धित परम्परागत तौर तरीके अपनाते हैं।

वर्तमान समय में कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिये कई वैज्ञानिक विधियों एवं रसायनिक खादों का उपयोग किया जा रहा है। परन्तु इनका पर्यावरण एवं मृदा की गुणवत्ता पर बुरा असर पड़ता है। गोबर की खाद से उत्पन्न खाद्य पदार्थ स्वास्थ्य के लिए गुणकारी एवं अरोग्य मुक्त होते हैं। इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखकर आम जन जैविक खेती के महत्व को समझते हुये नये युग का सूत्रपात हो रहा है। जैविक खेती से उत्पन्न उत्पादों का महत्व बढ़ता चला जा रहा है। पर्वतीय भू-भाग में जैविक खेती परम्परागत रूप से होती चली आई है। गोठ प्रथा जैविक खेती के उत्पादन में अहम भूमिका निभाती है।

गोठ प्रथा की वर्तमान स्थिति

समय के साथ-साथ सब कुछ बदलता चला गया। जैसे-जैसे शिक्षा, आवागमन के साधनों का विकास, सामूहिक परिवार प्रथा का अन्त, पलायन, परिवार नियोजन, सरकारी सहायता का उदय, रोजगार एवं शिक्षा के लिये पलायन तथा तृतीयक क्रिया कलापों का विकास होता चला गया, इनका प्रत्यक्ष एवं परोक्ष प्रभाव पर्वतीय कृषि एवं पशुपालन व्यवसाय पर पड़ता चला गया। स्थानीय निवासियों का ध्यान तृतीयक क्रियाकलापों की ओर बढ़ता जा रहा है। रोजगार एवं उत्तम शिक्षा की चाह में नवयुवकों का पलायन होता चला गया। परिवार के आकार भी लघु होते गये। महिला शिक्षा का बहुत तेजी से विकास होता चला गया। इससे कृषि एवं पशुपालन व्यवसाय में श्रम शक्ति में कमी आने लगी। इसका सबसे पहला प्रभाव पशुपालन पर पड़ा। धीरे-धीरे स्थानीय निवासियों ने पशुओं को पालना ही बन्द कर दिया। इसका प्रभाव कृषि पर पड़ना स्वाभाविक ही था। जैसा कि पहले बताया गया है कि बिना पशुपालन के कृषि नहीं और बिना कृषि के पशुपालन संभव नहीं है।

गाय-बैल व भेड़-बकरियों की संख्या में कमी होती चली गई तो गोठ लगाना भी धीरे-धीरे कम होता चला गया। गोठ लगाना एक बहुत श्रम आधारित कार्य है। पलायन से श्रमशक्ति में कमी होती चली गई। पुरुषों की संख्या में कमी से भी गोठ प्रथा को संचालित करना कठिन होता गया। पहले ग्राम में सभी परिवार गोठ लगाते थे। परन्तु वर्तमान समय में कुछ गिने परिवार ही खेतों में गोठ लगाते हैं। कई ग्रामों में तो यह प्रथा प्रायः समाप्त हो गई है। पौड़ी गढ़वाल, चमोली तथा अल्मोड़ा जनपदों के कुछ ग्रामों में अब गोठ प्रथा चल रही है नहीं तो यह परम्परागत जैविक खेती करने की गोठ प्रथा प्रायः समाप्ति पर है। गढ़वाल हिमालय का दूधातोली पर्वत श्रृंखला के चारों ओर गोठ प्रथा आज भी कई ग्रामों में संचालित की जाती है।

गोठ लगाना एक श्रम साध्य कार्य तो है ही, निरन्तर जानवरों के साथ रहना, जंगल में चराना, जंगली जानवरों से उनकी रक्षा करना, शीत एवं गर्मी से उनका बचाव करना, रात में गोठ में उनकी रक्षा करना इत्यादि कई कारण मानव को आधुनिक सामाजिक प्रक्रिया से दूर कर देती है जो आज का नवयुवक पसन्द नहीं करता है। नई पीढ़ी के लोगों का रुझान प्रारम्भिक व्यवसाय की ओर धीरे-धीरे कम होता चला जा रहा है।

स्थानीय निवासियों की आवश्यकताओं की पूर्ति धीरे-धीरे बाजार आधारित वस्तुयें लेती जा रही हैं। बची-खुली आवश्यकतायें भी सरकारी वी0पी0एल0, ए0पी0एल0, खाद्य सुरक्षा योजना तथा मुफ्त में राशन योजनाओं ने पूरी कर दी है। इसका प्रत्यक्ष प्रभाव पर्वतीय क्षेत्रों के कृषि एवं पशुपालन व्यवसाय पर पड़ा है। कृषि व्यवसाय धीरे-धीरे ह्रास की ओर है। पलायन के

कारण ग्राम खाली होते चले जा रहे हैं। कुछ लोग ग्राम में रहकर जैविक खेती करना भी चाहते हैं तो सुअर, बन्दर इत्यादि जंगली जानवर उसे नष्ट कर देते हैं तथा कुछ भी उत्पादन नहीं करने देते हैं। यह एक चिन्ता का विषय है।

पर्वतीय क्षेत्रों में जैविक कृषि को सुचारू रूप से संचालित करने तथा पलायन को रोकने के लिये निम्न सुझाव दिये गये हैं-

1-सरकारी स्तर पर जैविक कृषि से उत्पादित पदार्थों के उत्पादन पर जोर दिया जाना चाहिए क्योंकि जैविक कृषि पदार्थों की वर्तमान समय में अत्यधिक मांग है जबकि उनकी पूर्ति न्यूनतम है।

2- कृषि उत्पादन में परम्परागत फसलों के स्थान पर बाजार आधारित व्यापारिक फसलों के उत्पादन पर अधिक बल दिया जाना चाहिए। उदाहरण के लिये दालें (गहत, भट्ट, सोयाबीन, चौलाई, ओगल एवं कोटू), सब्जियां व फूल इत्यादि।

3- किसान के उत्पादित पदार्थों के विक्रय की व्यवस्था एवं कीमत के तुरन्त भुगतान की व्यवस्था करनी चाहिए।

4- कुछ व्यापारिक फसलों को उगाने के लिये स्थानीय लोगों को प्रेरित किया जाना चाहिए जैसे अदरक, लहसुन, हल्दी एवं मिर्च इत्यादि।

5 जून पर्यावरण दिवस पर विशेष

वैचारिक प्रदूषण

राजेन्द्र पाल शर्मा

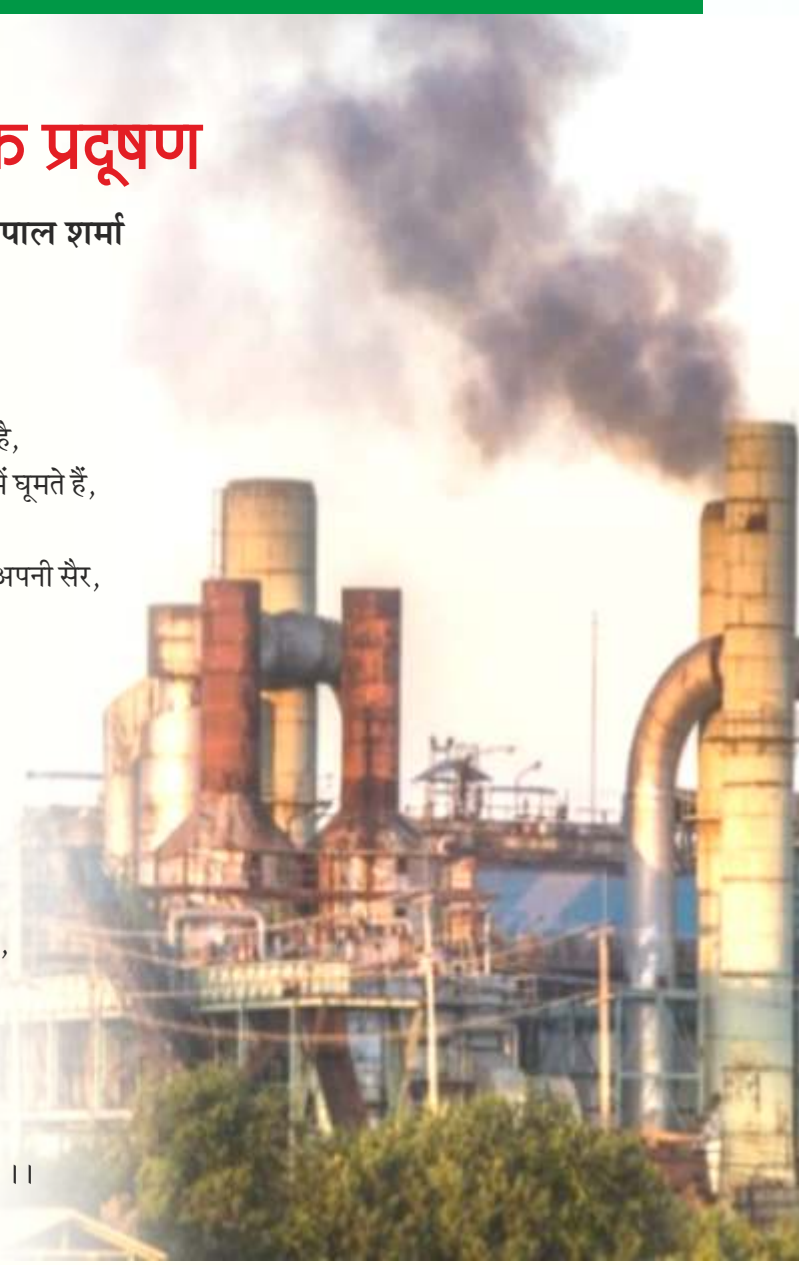

ब्रह्मांड में गति जीवन के आधार का मूल मन्त्र है,
सभी ग्रह, चाँद-सितारे अपनी निर्धारित कक्षाओं में गतिशील है,
एक निश्चित वेग से व पूर्ण निष्ठा से अपनी-अपनी कक्षाओं में घूमते हैं,
कहीं कोई उपद्रव नहीं, कहीं कोई अतिक्रमण नहीं,
ना काहु से दोस्ती ना काहु से बैर, अपने-अपने घर में अपनी-अपनी सैर,
अंबर में सब नियन्त्रित है, पर कोहराम मचा अवनी पर है,
अरबों-खरबों के जीव-जन्तु, रहते तो इसी धरा पर हैं,
स्वछन्द घूमते, खाते-पीते जंगल में जीवन जीते हैं,
घृणा-द्वेष से दूर, पेट भर खा कर ये सो जाते हैं,
मानव जाति का एक जीव सदियों तक इनके संग रहा
बुद्धि-विवेक के बल पर वो इन सब का राजा बन बैठा,
समय बीतते परिवार बढ़े, कबिलों के सरदार बने,
धरती पर खिंचती रेखा से, राज्य बने और बनी देश की सीमाएं,
दूषित सोच का विस्तार हुआ और अतिक्रमण का जन्म हुआ,
गाँव बसे, शहर बने व महानगरों का निर्माण हुआ,
अब गिद्ध-दृष्टि में होड़ लगी, ऊँचे भवनों का स्वप्न जगा,
ललचाया मन ताकत का बल, लूट-खसोट का यन्त्र बना,
प्रारम्भ हुआ युग परिवर्तन का क्षण, मानव मस्तिष्क भ्रष्ट हुआ ।।

वैज्ञानिक विभूतिः डॉ० मीरा तिवारी

डॉ0 मीरा तिवारी संकल्प की धनी तथा सुलझी हुई महिला होने के साथ-साथ सफल सेवा निवृत्त वैज्ञानिक हैं। डॉ0 तिवारी ने अपनी वैज्ञानिक यात्रा सबसे नीचे के पायदान से शुरू कर निजी जिंदगी में आए भयंकर झंझावतों को झेलते हुए उच्चतम सोपान तक ले जा कर समाज के सम्मुख एक आदर्श प्रतिमान स्थापित किया है। भूवैज्ञानिकों के जीवन में आने वाली कठिनाईयों को पहाड़ों जैसा आत्मविश्वास और चुनौतियों को स्वीकार कर अपने आप को बिना विचलित हुए ध्येय पर ही ध्यान केंद्रित करना वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान की सेवा निवृत्त पूर्व निदेशक डॉ0 मीरा तिवारी की पहचान रही है। अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के विशेष संदर्भ में मानवीय जिज्ञासा से प्रेरित हो कर **सोनाली कठैत** से हुई बातचीत के अंश।

किसी भी व्यक्ति के जीवन में बचपन एक महत्वपूर्ण पड़ाव होता है। आपका बचपन कैसा रहा, आप कहाँ से हैं, आपकी पारिवारिक पृष्ठभूमि क्या थी? और आपने अपनी स्कूली शिक्षा कहाँ से प्राप्त की थी?

मेरा जन्म 2 अप्रैल 1959 को नैनीताल, उत्तराखंड में हुआ था। मेरे पिता कुमाऊं विश्वविद्यालय में सहायक रजिस्ट्रार थे और माँ एक गृहिणी थीं। 12वीं तक की मेरी स्कूली शिक्षा गवर्नमेंट गर्ल्स इंटर कॉलेज, नैनीताल से हुई। वहां का माहौल बहुत सकारात्मक था, हमारे शिक्षक बहुत अच्छे थे। हमने वहां से बहुत कुछ सीखा। हम संयुक्त परिवार में रहते थे और हमारे घर का माहौल बेहद अध्ययनशील था। वहां कोई टीवी नहीं था, एक रेडियो था, (हंसते हुए) लेकिन उसे बहुत ज्यादा सुनने की अनुमति नहीं थी, खासकर सुबह के समय। हम सभी भाई-बहन खूब पढ़ाई करते थे।

आपने अपनी स्नातक और स्नातकोत्तर की पढ़ाई कहाँ से की, और आपने भूविज्ञान को एक विषय के रूप में क्यों चुना?

मैंने अपनी स्नातक(1977) और परास्नातक पद Geology (1979) की पढ़ाई कुमाऊं विश्वविद्यालय से की, उस समय बी. एससी. 2 वर्ष की अवधि की हुआ करती थी। मैंने अपनी पीएचडी भी वहीं से की। 1976 में भूविज्ञान वहाँ एक नये विषय के रूप में आया। हमारा वहाँ भूविज्ञान का पहला बैच था। और इसी ने एक विषय के रूप में भूविज्ञान में रुचि जगाई। मुझे भूविज्ञान के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। असल में मुझे क्या, किसी को भी नहीं मालूम; लेकिन मेरे पिता ने सोचा कि यह एक अच्छा विकल्प होगा, इसलिए उन्होंने मुझे इसे एक विषय के रूप में लेने का सुझाव दिया। और उसके बाद मुझे लगता है कि मेरी जिज्ञासा ने ही मुझे स्नातकोत्तर में इसे एक प्रमुख विषय के रूप में लेने के लिए प्रेरित किया। उस समय भू विज्ञान का अध्ययन बहुत मुश्किल था, क्योंकि हमारे पास किसी भी तरह की किताब नहीं थी, भूविज्ञान में एक किताब है जिसका नाम रटलेज मिनरालॉजी है, यह उस समय 100 रुपये में बेची जाती थी। उस समय न तो इंटरनेट था, बाकी सब्जेक्ट्स में टीचर्स नोट्स दे देते थे पर इस सब्जेक्ट में ऐसा कुछ नहीं था और न ही इस विषय से जुड़ी बहुत सारी किताबें थीं, अगर किसी को कोई किताब मिल जाती थी तो वह सबको दे दी जाती थी। जब भी हम किसी भू वैज्ञानिक भ्रमण पर जाते थे, तो हमेशा किताबें खोजते रहते थे। इसलिए भूविज्ञान की पढाई मज़ेदार होने के साथ-साथ कठिन भी थी। तो जो कुछ भी शिक्षकों ने हमें सिखाया और जो चीजें हमने उपलब्ध पुस्तक से सीखीं, वही थीं। हम 24-25 विद्यार्थी थे जिनमें हम तीन लड़कियाँ थीं। भूविज्ञान एक field subject है, तो हमारे प्रोफेसर हमें हर रविवार फील्ड पर ले जाते थे।

एम.एस.सी. में हम 8 विद्यार्थी थे। और मैं वहां अकेली लड़की थी। सभी ने मुझसे कहा कि आपको भूविज्ञान को एक विषय के रूप में नहीं लेना चाहिए, लेकिन मैं इसे परास्नातक के लिए एक विषय के रूप में लेने को तैयार थी। यहां तक कि मेरे शिक्षकों ने भी मुझे यही सुझाव दिया। इसलिए कठिनाई थी लेकिन वहां का माहौल वास्तव में अच्छा था, इसलिए इससे मुझे बहुत मदद मिली। जब मैं मास्टर्स में थी, तब हम जावर माइंस भी गए थे, और मैं वहां जावर अंडरग्राउंड माइंस का प्रशिक्षण पाने वाली पहली महिला थी।

आपने जीवसंस्तरिकी में पीएच.डी. की है, आपने इसे अपनी उच्च शिक्षा के लिए एक शाखा के रूप में क्यों चुना? इसके लिए आपके गाइड कौन थे? और आपका शोध क्षेत्र क्या था?

मेरे गाइड डॉ. के.एस वल्दिया सर थे, और उनके साथ काम करना हमारे लिए एक सुनहरे अवसर जैसा था, वह वास्तविक अर्थों में सज्जन व्यक्ति थे, विनम्र थे और हम सभी के लिए एक पिता तुल्य व्यक्ति थे। मेरा शोध क्षेत्र गेठिया, नैनीताल में था। मैंने अपनी पीएच.डी. शुरू की 1980 में और, फिर अक्टूबर 1983 तक अपना काम जमा किया। मैंने इसे एक शोध विषय के रूप में चुना क्योंकि वल्दिया सर ने मुझे इसका सुझाव दिया था। उन्होंने मुझे बताया कि यह संबंधित क्षेत्र समस्याग्रस्त था। इसलिए वह चाहते थे कि हम वहां जीवाश्म खोजें, जिससे उस क्षेत्र से संबंधित समस्याओं को हल करने में मदद मिल सके। मुझे उनके विचार सही लगे इसलिए मैंने जीवसंस्तरिकी (बायोस्ट्रेटीग्राफी) को चुना। यह आकस्मिक नहीं था, उस क्षेत्र में तब तक कोई जीवाश्म नहीं मिला था, इसलिए मैं वहां काम करके नए जीवाश्मों की खोज करना चाहती थी जो कि आगे जाके मैंने की। वहां मुझे बहुत अच्छे जीवाश्म मिले। मेरे गाइड ने मुझे विभिन्न विश्वविद्यालयों में भेजा, मैं लखनऊ विश्वविद्यालय, जम्मू विश्वविद्यालय, बनारस हिंदी विश्वविद्यालय गई, मैंने अपनी पीएच.डी. के लिए सभी का सहयोग लिया और वास्तव में मैं अपने द्वारा लिए गए नमूने विदेशों में भी भेजे, ताकि वे इनकी पहचान करने में मेरी मदद कर सकें। मैं सिर्फ अपने विश्वविद्यालय में ही नहीं बैठी, मैं चंडीगढ़ विश्वविद्यालय गई, और वहां SEM (Scanning Electron Microscope) भी मैंने सीखा। मेरा परिवार भी खुले विचारों वाला था और उन्होंने मुझे कभी भी फील्ड वर्क करने और कहीं जाने से नहीं रोका। उन्होंने हमेशा मेरा समर्थन किया।

हमारे गाइड ने पहले ही कह दिया था कि आपको कोई अलग से विशेष सुविधा या स्पेशल ट्रीटमेंट नहीं मिलेगा, जो एक दम सही था, असल में हम जिस घर से हैं, वहां भी कभी हमने कोई भेदभाव नहीं देखा, कभी हमें काम करने से किसी ने नहीं रोका।

उस समय चीजें इतनी आसान नहीं थीं जितनी अब हैं, हमारे पास आजकल तेज इंटरनेट और तकनीकी रूप से कई अन्य चीजें हैं, आपने अपनी पीएच.डी. की। आपको किन चुनौतियों का सामना करना पड़ा, आपने अपने क्षेत्र में कैसे काम किया और इन चुनौतियों से कैसे पार पाया?

हां, यह चुनौतीपूर्ण था, आजकल हमारी इंटरनेट तक पहुंच है, लेकिन उस समय, हम सिर्फ एक उत्तर खोजने के लिए पूरा एक दिन लाइब्रेरी में बिताते थे, और आजकल सब कुछ सिर्फ एक क्लिक की दूरी पर है। हमारे समय में, हम वहां जाते थे एक सवाल का जवाब ढूंढने के लिए, लेकिन इसके साथ हम 4 और जवाब ढूंढ लेते थे (हंसते हुए)। मेरा परिवार हमेशा मेरा समर्थन करता था इसलिए मुझे अधिक चुनौतियों का सामना नहीं करना पड़ा।

आप पहले शोध क्षेत्र और फिर वाडिया हिमालय भू विज्ञान संस्थान, देहरादून (WIHG) से कैसे जुड़ी? आपका शोध विषय क्या रहा है, और आपने कहाँ-कहाँ शोध कार्य किए हैं? आप एक वैज्ञानिक 'G' होने के साथ-साथ इतने महत्वपूर्ण संस्थान वाडिया संस्थान के निदेशक भी रहीं हैं, जो एक ऐतिहासिक उपलब्धि है, कृपया हमें इसके बारे में बतायें?

मैंने अपने रिसर्च केरियर की शुरूआत पहले जूनियर और बाद में सीनियर रिसर्च फेलों के तौर पर वाडिया संस्थान में कार्य करने के बाद 1984 में वहां पर साइंटिस्ट भी बन गई, मैंने साइंटिस्ट 'बी' से शुरुआत की और वक्त के साथ साइंटिस्ट 'जी' और उसके बाद में वहां कि निदेशक भी बन गई। मैंने कोई सीढ़ी नहीं छोड़ी। 35 साल मैंने वहां नौकरी की, वहीं से शुरू करके वहीं पर खत्म भी किया, और मैं वाडिया इंस्टीट्यूट की बहुत आभारी हूं। वल्दिया सर ने वाडिया इंस्टिट्यूट में भी काम किया था, इसलिए हमें इस बारे में पता था। मेरे पास अन्य जगहों से भी ऑफर थे लेकिन मैंने वाडिया इंस्टीट्यूट को चुना। 20 वर्षों तक मैं वहां अकेली महिला वैज्ञानिक थी। लेकिन मेरे सहकर्मियों ने मुझे कभी भी यह अहसास नहीं होने दिया कि मैं एकमात्र महिला हूं, मुझे वहां सकारात्मक माहौल मिला, बेशक कुछ समस्याएं थीं लेकिन समर्थन उससे कहीं अधिक था। मैंने खुद को एक वैज्ञानिक के रूप में देखा न कि पुरुष अथवा महिला। यदि आप सिर्फ एक महिला के रूप में चलेंगी, तो यह मुश्किल होगा, इसलिए एक कार्यकर्ता के रूप में चलें। एक बार किसी ने मुझसे मेरे महिला होने के बारे में कुछ कहा था, और मैंने उनसे कहा था कि 'मैं एक महिला के रूप में नहीं बल्कि एक वैज्ञानिक के रूप में काम करने आई हूं, इसलिए मेरे साथ एक वैज्ञानिक की तरह व्यवहार करें।' मैंने कभी कोई विशेष सुविधा नहीं मांगी, मेरे लिए महिला होना एक भगवान का उपहार है, यह हमें किसी से कम नहीं बनाता। मैंने अपनी मेहनत से उन सभी को गलत साबित किया है, जो सोचते थे कि मैं सिर्फ इसलिए कुछ नहीं कर सकती, क्योंकि मैं एक महिला हूं। मुझे किसी भी तरह का काम करने में दिक्कत नहीं होती और हमेशा अपना सम्मान करना याद रखे, काम कठिन हो सकता है, असंभव नहीं अपने काम को अपने लिए बोलने दें। मैंने नैनीताल समेत हिमालय से शुरू किया, और साथ में गढ़वाल हिमालय, पर भी बहुत काम किया, इसी के साथ मैंने टेथीस हिमालय पर भी काम किया है, कश्मीर पर भी मैंने शोध पत्र प्रकाशित किया, लेकिन फिर कुछ परिस्थितियों के कारण मैं वहां अपना काम जारी नहीं रख सकी।

एक वैज्ञानिक और निदेशक दोनों के रूप में आपका क्या योगदान रहा? आपने संस्थान के कामकाजी माहौल को बेहतर बनाने के लिए क्या बदलाव किए?

यह पहले से ही एक शानदार कार्यस्थल था और अच्छी तरह से सुसज्जित था, हालांकि एक निदेशक के रूप में, मैंने हमेशा अपने कर्मचारियों की एकता, और मानसिक स्वास्थ्य पर ध्यान केंद्रित किया। मैं वहां सभी को अच्छी तरह से जानती थी इसलिए मुझे पता था कि कौन किस काम में अच्छा है, इसलिए उन्हें तदनुसार कर्तव्य और परियोजनाएं सौंपी। मैं नहीं चाहती थी कि किसी को किसी भी तरह की बाधा का सामना करना पड़े, इसलिए मैंने उनके काम करने के लिए एक सकारात्मक माहौल बनाने पर ध्यान केंद्रित किया, और मैंने हमेशा यह भी देखा कि नियमों का पूरी निष्ठा से पालन किया जाए। इस समय हमने वाडिया इंस्टीट्यूट की स्वर्ण जयंती भी मनाई, इसलिए मैंने सभी के साथ मिलकर काम किया और इसे सफल बनाया। कार्यालय में सभी ने इसके लिए मिलकर काम किया, मैंने हमेशा एकता पर अधिक ध्यान केंद्रित किया। हमने कार्यक्रमों की एक श्रृंखला आयोजित की और मुझे गर्व महसूस हुआ कि मुझे इसका संचालन और आयोजन करने का मौका मिला। सभी ने मेरे साथ बहुत अच्छा सहयोग किया, मैंने यह सब अकेले नहीं किया, सभी ने मेरे साथ काम किया जिससे सब कुछ संभव हो सका के साथ।

इसके अलावा पिछले लंबित मुद्दों को भी निपटाया ताकि हर कोई मन की शांति के साथ काम कर सके। मैंने अपने वरिष्ठों, जो सेवानिवृत्त हो चुके थे, की राय जानने पर भी ध्यान केंद्रित किया और उनसे हमारे काम में बेहतरी के लिए इनपुट देने को कहा।

महिलाओं के लिए काम करना कभी भी आसान नहीं रहा है, क्योंकि कार्यक्षेत्र हमेशा से पुरुष प्रधान रहा है, लेकिन आपने सफलताएँ हासिल की हैं, लेकिन क्या आपको कभी अपने कार्यक्षेत्र में अपने पुरुष सहकर्मियों से किसी तरह के भेदभाव का सामना करना पड़ा है, आपने इसका सामना कैसे किया और महिलाओं, के प्रति ऐसे व्यवहार से बचने के लिए विज्ञान के क्षेत्र में क्या सुधार किए जाने चाहिए?

भेदभाव तो तब होता है जब मैं होने देती, आपको कभी भी खुद को किसी से अलग नहीं समझना चाहिए, मेरे सहकर्मी बहुत अच्छे थे, हम साथ बैठते थे, और हर चीज के बारे में बात करते थे। वहाँ बहुत स्वस्थ वातावरण था।

आप एक वैज्ञानिक होने के नाते बहुत अधिक समय कार्य के लिए देना होता है विशेष रूप से महिलाओं के लिए, क्योंकि वे

घर के साथ- साथ अपने कार्यक्षेत्र का भी ख्याल रखती हैं, आपने अपने कार्यक्षेत्र और निजी जिन्दगी में संतुलन कैसे बनाया? और आपके अनुसार समाज, परिवार और कार्यस्थल में महिलाओं की क्या भूमिका होनी चाहिए?

पूरा दिन काम करने के बाद तो वैसे भी आपके अंदर ताकत नही बचती है, इसलिए आप वक्त पर जाएं वक्त पर आएं, मैं जैसे ही घर आती थी तो अपने वैज्ञानिक का मुकुट उतारकर एक घर का मुकुट पहन लेती थी।

मेरे पति भी एक वैज्ञानिक थे इसलिए वह काम से परिचित थे, वह भी बहुत सहयोगी थे और मेरी बहुत मदद करते थे, आपके परिवार का सहयोग भी महत्वपूर्ण है। हमें व्यक्तिगत और व्यावसायिक जीवन के बीच एक अच्छा संतुलन बनाए रखने की आवश्यकता है। हमें काम से चीजें घर और घर से चीजें काम पर नहीं ले जानी चाहिए।

मैं ऑफिस का काम घर पर नहीं करती थी। मैं तो अपने बच्चों का होमवर्क भी करवाती थी, और ऐसा नहीं है कि मैं थकती नहीं थी, पर ये भी जरूरी था। आपके परिवार को भी आपसे उम्मीदें हैं। मैं ठीक 9 बजे जाती है और फिर 5.30 बजे निकल जाती थी, और मैं शायद ही कभी छुट्टियाँ लेती थी। अब मेरे बच्चे बड़े हो गए हैं और काम कर रहे हैं। और वे मुझसे कहते हैं कि कार्यालय से कभी भी अनावश्यक छुट्टी न लेना उन्होंने मुझसे सीखा है। जब भी मैं फील्ड टूर पर जाती थी तो अपने बच्चों की छुट्टियों को ध्यान में रखती थी, और तभी जाती थी। हालाँकि, मैंने कुछ समझौते किए हैं, कुछ परियोजनाएँ हैं जिन्हें मैंने परिवार की वजह से नहीं लिया है, लेकिन मुझे इसका बिल्कुल भी अफसोस नहीं है।

परिवार में महिला की भूमिका बहुत बड़ी होती है, आपको एक बेटी के रूप में अपने माता-पिता की अच्छी तरह से देखभाल करनी होती है, फिर जब आप माँ बनती हैं, तो आपके बच्चों की भलाई आपके लिए महत्वपूर्ण हो जाती है। जब आप ऑफिस जाएं तो समय पर जाएं और सभी का सम्मान करें, साथ ही अपना भी सम्मान बनाए रखें। समाज में भी महिलाओं की भूमिका बहुत बड़ी है, बस आपको इसे समझने की जरूरत है।

परिवार के बारे में बात करें तो, यह मनुष्य के जीवन का सबसे महत्वपूर्ण पहलू है, हम जो कुछ भी करते हैं वह परिवार के लिए करते हैं, आपने अपने निजी जिंदगी में भयंकर आघात, पति का असामयिक निधन का सामना किया, लेकिन फिर भी आपने काम करना जारी रखा और समाज के लिए उदाहरण स्थापित करा की एक महिला कितनी मेहनती और दृढ़ इच्छाशक्ति वाली हो सकती है, आपने अपने जीवन के उस दौर को कैसे पार किया, आप उन सभी महिलाओं को क्या सलाह देना चाहेंगी जो अपने निजी जीवन में कठिनाइयों से जूझ रही हैं?

सच बोलू तो, मैंने कभी नहीं सोचा था कि मुझे अपने जीवन में ऐसे मोड़ का सामना करना पड़ेगा।

जो कुछ भी हुआ उससे मैं उबर नहीं पायी हूं, यह मेरे लिए कठिन था लेकिन यह मेरे बच्चे ही थे जिनके लिए मैंने अपने आप को बेहद मजबूत बनाया, वे उस समय बहुत छोटे थे। मैंने अपने बच्चों से कहा कि पढ़ाई आपके भविष्य के लिए महत्वपूर्ण है और अगर आप पढ़ाई नहीं करेंगे तो यह गलत होगा।

जहां तक मेरी बात है चीजें टफ तो हो गई थीं, मैंने अपने बच्चों से कहा कि मैं यहां तुम्हारे लिए हूं, तुम्हें चिंता करने की जरूरत नहीं है, मैंने उनके सामने खुद को मजबूत बनाया, हालांकि मैं अंदर से टूट रही थी।

मैं यह सब अपनी नौकरी के कारण कर पाई , और जिन लोगों के साथ मैंने काम किया, उन्होंने भी जीवन के इस चरण में मुझे पूरा सपोर्ट दिया। यह चरण वास्तव में मेरे लिए जीवन बदलने वाला था और मैंने इससे जीवन के बहुत सारे सबक भी सीखे। आपको खुद पर भरोसा रखने की जरूरत है। सबसे बड़ी भूमिका मेरी शिक्षा ने निभाई, इसलिए मैं हर किसी को सलाह दूँगा कि अपनी बेटी को खूब पढ़ने दें। ध्यान, योग और किताबें पढ़ने से मुझे बहुत मदद मिली। आपको समभाव रखना सीखना जरूरी है।

आज आप हर युवा महिला वैज्ञानिक के लिए एक रोल मॉडल हैं, लेकिन विज्ञान के क्षेत्र में आपका भी कोई रोल मॉडल रहा होगा, वह कौन है?

मुझे लगता है कि हर किसी के जीवन में केवल एक ही रोल मॉडल नहीं होता है, हम किसी को उसकी कार्य नैतिकता के लिए, किसी को उसके काम संभालने के कौशल के लिए, किसी को उसके व्यवहार आदि के लिए पसंद करते हैं, मुझे लगता है कि हमें हर किसी से ज्ञान और अच्छी आदतें हासिल करनी चाहिए, चाहे वह वैज्ञानिक हो या नहीं। मुझे लगता है कि जीवन के हर चरण में आपको एक आदर्श मॉडल मिलता है जो आप पर छाप छोड़ता है, कोई भी पूर्ण नहीं है, इसलिए मैंने बहुत से लोगों से सीखा है।

वास्तव में ज्ञान किसी से भी प्राप्त किया जा सकता है, चाहे वह आपसे छोटा हो, आपके जैसा ही उम्र का हो या अधिक उम्र का हो, इसलिए मैं यह नहीं कहूंगी कि मेरे पास एक आदर्श है, मैं बहुत

सारे लोगों से मिली हूं जिन्हें मैं एक आदर्श मान सकती हूं, लेकिन एक व्यक्ति जिनकी नैतिकता बचपन से मेरे साथ रही है, वे मेरे पिता हैं, उन्होंने मुझे अनुशासित रहना, कड़ी मेहनत करना और ईमानदारी से जीवन जीना सिखाया। किसी ने एक बार मुझसे कहा था कि तुम एक ईमानदार शिक्षक की छात्रा हो, तो मैंने उनसे कहा कि 'यह सच है लेकिन मैं एक ईमानदार पिता की भी बेटी हूं।'

मेरे परिवार ने मुझे अनुशासित बनाने में बड़ी भूमिका निभाई और यह मेरे लिए बहुत मायने रखता है।

अब वो जमाना आ गया है जहां महिलाएँ भी हर जगह पुरुषों से कंधे से कंधा मिलाकर काम करती हैं फिर चाहे कोई भी फील्ड क्यों ना हो, आपका क्या विचार है हम विज्ञान के क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी को और अधिक बढ़ाने के लिए कैसे कर सकते हैं?

मुझे लगता है कि परिवार इसमें एक बड़ी भूमिका निभाता है। मेरे अनुसार लड़कियों को शिक्षा के महत्व के बारे में बताने के लिए स्कूलों में सेमिनार और कार्यशालाएं आयोजित किए जाने चाहिए।

मेरे अनुसार हमें शिक्षा प्राप्त करने के लाभों के बारे में जागरूकता फैलानी चाहिए। मैं भी स्कूलों में जाती थी और उन्हें माइक्रोस्कोप के बुनियादी उपयोग जैसी विभिन्न चीजें सिखाती थी। मैं वहां जाती थी और बताती थी, कि मैंने अपनी स्कूली शिक्षा भी एक सरकारी स्कूल से की है, लेकिन इसने मुझे अपने सपनों को हासिल करने से नहीं रोका। वह स्कूल है जो मायने रखता है, यह अध्ययन करने और ज्ञान प्राप्त करने की आपकी इच्छा है जो आपको जीवन में महान चीजें हासिल करने में मदद करती है।

लैंगिक समानता के बारे में आपके क्या विचार हैं?

किसी भी समाज में हर किसी को बिना किसी भेदभाव के अपने हिसाब से जीवन जीने का अधिकार है। मेरा अपना एक बेटा और बेटी है, और मैंने उनके बीच कभी भेदभाव नहीं किया है। यहां तक कि मेरे परिवार में भी मेरे माता-पिता ने मुझे, मेरी बहन और मेरे भाइयों दोनों को स्वतंत्रता दी। मेरा मानना है कि कार्यस्थल पर भी हमें हर किसी का सम्मान करना चाहिए और सभी के साथ समान व्यवहार करना चाहिए।

एक राष्ट्र को सही स्थान तरह की प्रगति करने के लिए हर लिंग को समान रूप से महत्व देने की आवश्यकता है। एक समाज सभी पहलुओं में बेहतर विकास प्राप्त करता है जब दोनों लिंग समान अवसरों के हकदार होते हैं।

आज भी कई महिलाओं को अपनी सास-ससुर द्वारा उत्पीड़न का सामना करना पड़ता है, इसके लिए क्या किया जा सकता है, ऐसी चीजों से निपटने वाली महिलाओं की स्थिति में सुधार?

मुझे लगता है कि जब पहली बार ऐसा हो तो आपको अपनी आवाज उठानी चाहिए, हिंसा और मानसिक उत्पीड़न बर्दाश्त नहीं किया जाना चाहिए। कोई किसी पर हाथ कैसे उठा सकता है। उन्हें अपने परिवार से मदद मांगनी चाहिए और आपको अपने प्रति उत्पीड़न करने वाले किसी भी व्यक्ति को बताना चाहिए कि यह उचित नहीं है। आजकल बहुत सारी महिला देखभाल हेल्पलाइन हैं, आपको निश्चित रूप से वहां से मदद लेनी चाहिए, उत्पीड़न के संबंध में कानून हैं इसलिए आपको डरना नहीं चाहिए। शादी एक बड़ा फैसला है आपको यह फैसला हमेशा सोच समझकर लेना चाहिए।

आपने उत्तराखंड में रहकर और काम करते हुए लंबा समय बिताया है, आप क्या सोचते हैं कैसे? क्या हम महिलाएं उत्तराखंड के विकास और उत्थान में योगदान दे सकती हैं?

मुझे लगता है कि अगर आप पर्वतीय क्षेत्र में जाएं तो उत्तराखंड में महिलाएं ही घर चलाती हैं। मुझे लगता है कि सबसे पहले उनकी जीवनशैली में सुधार होना चाहिए, उन्हें चिकित्सा सहायता दी जानी चाहिए और उनके आहार में पोषक तत्वों के बारे में शिक्षा दी जानी चाहिए। हर परिवार को अपने घर की महिला का उसी तरह ख्याल रखना चाहिए जैसे वह उनका ख्याल रखती है। मेरा मानना है कि उत्तराखंड में महिलाओं को पढ़ाई के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। कड़ी मेहनत उनके आनुवंशिकी में है, इसलिए उन्हें अवसर दिया जाना चाहिए। हम गौरा देवी और कई अन्य उत्तराखंडी महिलाओं से उदाहरण ले सकते हैं, मैं भी वहीं से हूं। मैं अपनी शिक्षा के कारण इतना योगदान दे पाई। वहां महिलाएं बहुत कुछ कर सकती हैं, बस सहायता एवं मार्गदर्शन की जरूरत है। उन्हें उचित शिक्षा दें और देखें कि वे क्या हासिल कर सकते हैं।

आपका विज्ञान परिचर्चा को समय देने के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद और आशा है कि आपके विचारों से नयी उम्मीद जागेगी।

सेमीकंडक्टर चिप्स का निर्माण: आत्मनिर्भरता की ओर महत्वपूर्ण कदम

राजेन्द्र पाल शर्मा

प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने 13 मार्च 2024 को गुजरात के धोलेरा व साणंद और आसाम के मोरीगांव में 1.25 लाख करोड़ रूपये की लागत से बनने वाले सेमीकंडक्टरों के चिप के उत्पादन करने वाले संयंत्रों का शिलान्यास किया। अहमदाबाद से 105 किमी दूर धोलेरा में 91,000 करोड़ मूल्य से माईक्रोन व टाटा समूह के द्वारा बनने वाले इन संयन्त्रों से भारत को इस क्षेत्र का वैश्विक उत्पादन केन्द्र बनने में सहायता मिलेगी। भारत आज विश्व में मोबाइल के निर्माण में दूसरे नम्बर पर व स्टार्टअप ईको प्रोग्राम के मामले में तीसरे नम्बर पर आ गया है। आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर भारत का यह महत्वपूर्ण व विस्मयकारी कदम है।

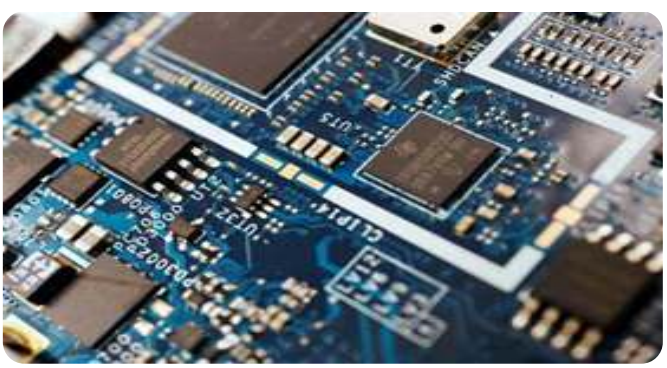

विश्व प्रोद्यौगिक क्रान्ति के तृतीय चरण (प्रोद्यौगिकी 3.0) के प्रारम्भ से सन् 1969 के आसपास आधुनिक कंप्यूटर, इलैक्ट्रॉनिक संचार, मशीन प्रोग्रामिंग, ओटोमेशन व इन्टरनेट के नवीन मापदंड व द्रुतगामी आयाम से तकनीकी क्षेत्र में विश्व के उन्नत राष्ट्र समृद्धि के पथ पर बढ़ रहे हैं। मानव की पृथ्वी से परे अन्तरिक्ष की सैर व अपोलो अभियान में चन्द्रमा पर चहलकदमी इसी क्रान्ति के सफल परिणाम हैं। वर्तमान में प्रोद्यौगिकी 4.0 के संदर्भ में तकनीकी क्षेत्र में सबसे बड़ा प्रभाव सेमीकंडक्टर सेक्टर में दिखाई दे रहा है। सेमीकंडक्टर चिप्स भावी तकनीकी की नवीनतम विधाओं में अपना महत्व सिद्ध कर रहे हैं। विश्व के सभी राष्ट्रों को अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए सेमीकंडक्टर तकनीक को अपनाना एक आवश्यकता बन गयी है ।

सेमीकंडक्टर चिप

सेमीकंडक्टर चिप जिसे सामान्य भाषा में इन्टीग्रेटिड सर्किट (IC) भी कहते हैं सम्भवत: दुनिया में बनने वाला एक अत्यन्त जटिल प्रोडेक्ट है। 1 मिमी मोटाई का एक सामान्य चिप लगभग 30–100 विभिन्न इलैक्ट्रॉनिक कम्पोनेंटस या उपकरणों की परतों को जो कई किमी लम्बी वेफर पर जमी तांबे की तारों से परस्पर जुड़े होते हैं, अपने आप में एक सूक्ष्म यन्त्र के समान होता है जिसका संचालन करोड़ों अतिसूक्ष्म स्विच (जिन्हें ट्रांजिस्टर कहते हैं) करते हैं ।

सेमीकंड़क्टर चिप को बनाने में अनेकों क्रमबद्ध स्टेप्स में कार्य होता है। मूल रूप से विश्व में चारों ओर फैले समुद्र के किनारों पर जमा 'बालू' इसकी उत्पत्ति का स्रोत है। बालू से सिलिकांन और फिर उसे कुछ अन्य धातुओं के संतुलित मिश्रण से सेमीकंड़क्टर बना दिया जाता है। सेमीकंडक्टर न तो पूर्णतया विद्युत चालक होता है और न ही कुचालक। इसके अन्दर विचरण करने वाले अति सूक्ष्म इलैक्ट्रोनों के आवागमन की गति को बाहरी विद्युत की सहायता से नियंत्रित कर अद्‌भुत खेल खेले जाते हैं और इन्हीं सूक्ष्म इलैक्ट्रोनिक अवयवों से मिल कर बन जाते हैं सेमीकंडक्टर चिप जो आज किसी राष्ट्र की प्रगति में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे है।

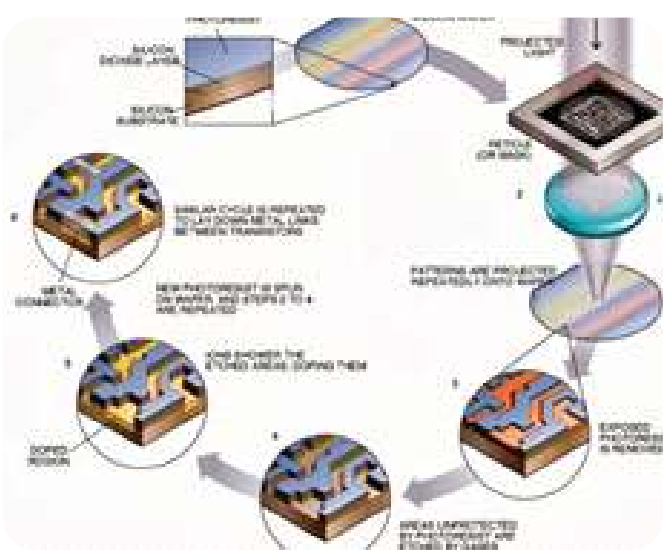

दिन प्रतिदिन मानव जीवन में इलेक्ट्रोनिक उपकरणों की उपयोगिता व आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर नये-नये सेमीकंडक्टर चिप्स जो पहले से अधिक उन्नत, सक्षम व आकार में छोटे हैं, बनते जा रहे हैं। मार्केट की आवश्यकता की पूर्ति के लिए आवश्यक है कि सेमीकंडक्टर तकनीक को अधिक सशक्त व आधुनिक बनाया जाए जिससे उपयुक्त इलेक्ट्रोनिक यन्त्र को समय पर बनाया जा सके और राष्ट्र की बढ़ती अर्थव्यवस्था को बेहतर बनाया जा सके।

सेमीकंडक्टर चिप्स को मुख्य रूप से चार भागों में बांट सकते हैं:-

1. **FPGA- Field Programmable Array**
   बदलती परिस्थिति के अनुसार चिप को प्रयोग कर सकें जैसे संचार व्यवस्था के उपकरण आदि ।
2. **GPU–Graphic Processing Unit**
   कंप्यूटर में ग्रैफिक्स व चित्र बनाने कं लिए ।
3. **CPU-Central Processing Unit**
   कंप्यूटर आदि उपकरण को प्रोग्राम के अनुसार चलाना
4. **ASICs- Application Specific ICs**
   एनक्रिप्सन व संचार नेटवर्किंग।

सेमीकंडक्टर चिप्स के प्रयोग के प्रमुख क्षेत्र

1. **इलैक्ट्रॉनिक उपकरण**
   स्मार्ट फोन, लैपटॉप, कंप्यूटर, टी वी, डाटा प्रौसेसिंग, स्टोरेज उपकरण और आन्तरिक संचार ।
2. **आई टी सेक्टर**
   कंप्यूटर, सर्वर ,नेटवर्किगं उपकरण ,रिले आन चिप्स ।
3. **प्रौद्यौगिक इलेक्ट्रॉनिकस**
   ओटोमेशन, रोबोटिक्स, इन्डस्ट्रियल कंट्रोल।
4. **स्वास्थ विभाग**
   डाईग्नोस्टिक उपकरण, ईमेजिंग व ओटी उपकरण ।
5. **इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IOT)**
   नेटवर्क संचार, सेन्सर डाटा, सीमलैस कनेक्टिविटी।

इन्डियन सेमीकंडक्टर मिशन (ISM)

दिसम्बर 2021 में भारत सरकार ने सेमीकंडक्टर के संदर्भ में एक अधिसूचना जारी की जिसमें सेमीकंडक्टर चिप्स और डिसप्ले इको सिस्टम के विकास के लिए 76,000 करोड़ रूपये का आबंटन किया गया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य है 'देश में अति आधुनिक सेमीकंडक्टर चिप्स व डिसप्ले ईको सिस्टम की नवाचार संरचना हो जिससे प्रगतिशील भारत इस क्षैत्र में वैश्विक केन्द्र बनने की ओर अग्रसर हो।'

जून 2023 में केन्द्रिय मंत्रीमंडल ने इस परियोजना का अनुमोदन कर भारत में तीन सेमीकंडक्टर इकाईयों को स्थापित करने का निर्णय लिया।

1. **टाटा इलैक्ट्रोनिक्स प्राइवेट लिमिटेड (TEPL)** भारत व ताईवान की कम्पनी पावर सेमीकंडक्टर मैन्युफैक्चरिंग कोर्पोरेशन (PSMC) मिलकर धोलेरा, गुजरात में 91,000 करोड़ रूपये के मूल्य से 28 mm तकनीकि वाले सेमिकंडक्टर चिप्स बनाएगीं जो उच्चशक्ति वाले विद्युतवाहन, रक्षा उपकरण, ओटोमोबाइल्स, कंज्यूमर इलैक्ट्रॉनिक्स में काम आयेंगे।
2. **टाटा सेमीकंडक्टर असैम्बिली व टेस्ट प्राईवेट लिमिटिड (TSAT)** मोरीगांव, आसाम में 27,000 करोड़ रूपये से सेमीकंडक्टर चिप्स की असेम्बिली, टेस्टिंग, मैनुफैक्चरिंग व पैकेजिंग (ATMP) की स्थापना करेंगी ।
3. **भारत की सी जी पावर कम्पनी जापान व थाईलैंड** की कंपनियों के साथ 7600 करोड़ रूपये की लागत से साणंद, गुजरात में सेमीकंडक्टर इकाई की स्थापना करेंगी।

आने वाले दो वर्षों में इन संस्थानों में चिप्स का उत्पादन प्रारम्भ हो जायेगा। लगभग 80,000 देशवासियों को प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार मिलेगा और देश की सेमीकंडक्टर चिप्स की आवश्यकता की कुछ अंश तक पूर्ति हो जायेगी।

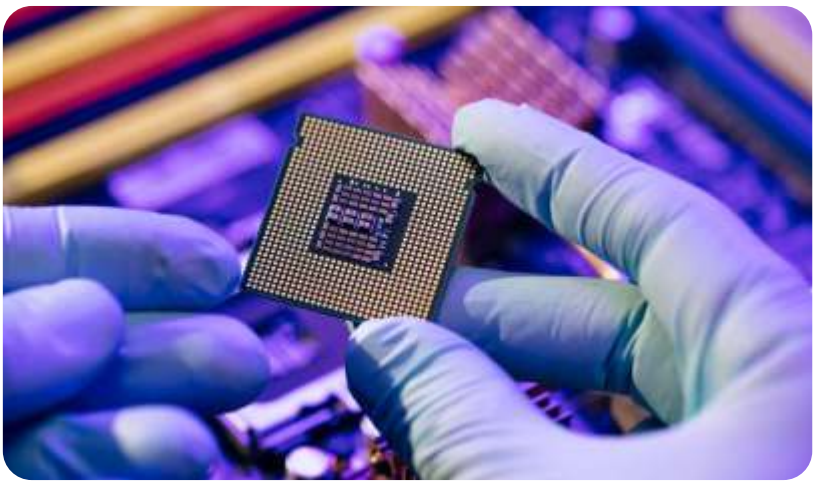

सेमीकंड़क्टर चिप्स का सामरिक महत्व

विश्व के लगभग सभी राष्ट्र इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि सेमीकंडक्टर तकनीक का प्रयोग युद्ध नीति में भी महत्वपूर्ण है और राष्ट्र की आर्थिक व सैनिक शक्ति का यह प्रतीक बन रही है। दुनिया में शक्ति संतुलन व शक्ति परीक्षण में अपना वर्चस्व बनाने के लिए सेमीकंडक्टर तकनीक एक फोर्स मल्टिप्लायर का कार्य कर रही है व देश की समृद्धि में सहायक है। अतीत में इस तकनीक का प्रयोग नाभकीय मिसाइल व अपोलो स्पेसक्रॉफ्ट में भी हुआ पर आज 98 प्रतिशत चिप्स का प्रयोग उपभोक्ता इलैक्ट्रोनिक्स, कंप्यूटर, वाहन, संचार प्रणाली व डाटा सेन्टर में हो रहा है।

विश्व में ताईवान लगभग 90 प्रतिशत अति आधुनिक, 7 mm तकनीकी के चिप्स का निर्माण कर रहा है। वर्तमान में 24 बिलियन डॉलर मूल्य के सेमीकंडक्टर चिप्स भारत में प्रयोग हो रहे हैं जो सन् 2025 में 100 बिलियन तक पहुच जाएंगे। भारत अभी आयातित चिप्स पर ही निर्भर है और अपनी बढ़ती आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विदेशी मुद्रा भंडार पर आश्रित है। अत: इंडियन सेमीकंडक्टर मिशन का शुभारम्भ स्वागत योग्य है ।

भविष्य की तकनीकी और चुनौतियां

सेमीकंडक्टर चिप आधुनिक विज्ञान की उन्नति व नवीनतम तकनीक का आधार बन गया है। सेमीकंडक्टर हमारी जीवन शैली में सुधार कर रहा है और उत्पादकता बढ़ाने के साथ राष्ट्र की अर्थव्यवस्था को आगे धकेल रहा है।

पीरियोडिक टेबिल के 118 पदार्थों में सिलीकॉन सेमीकंडक्टर उद्योग के लिए सबसे अधिक पसंदीदा और सस्ता पदार्थ है यद्यपि गैलेनियम आरसेनाइड, गैलेनियम नाईट्रेट एवं ट्राईमिथाइल गैलेनियम (TMGa) भी प्रयोग में लाए जा रहे हैं।

चुनौतियां

जैसे-जैसे आने वाले इलैक्ट्रोनिक उपकरणों का आकार लगातार छोटा होता जा रहा है चिप्स बनाने वाले इंजीनियर व तकनीशियन विभिन्न इलेक्ट्रोनिक कम्पोनेंटस को चिप पर आपस में जोडने के लिए प्रयोग में आ रहे महीन तार और अधिक पतले होते जा रहे हैं। बहुत से कंप्यूटर चिप में अनेक लेयरस में तांबे के तारों की लम्बाई 10 किमी तक पहुँच जाती है। भौतिकी का सिद्धांत है कि पतले तार में विद्युत प्रतिरोध बढ़ जाता है जिससे जहाँ इलैक्ट्रोन की मोबेलिटी प्रभावित होती है वहीं सर्किट में ऊष्मा का उत्पादन बढ़ जाता है। भविष्य में कोबाल्ट धातु के प्रयोग से चुनौती को हल किया जा सकता है।

विशाल धनराशि

एक छोटा सा सेमीकंडक्टर संयत्र लगाने के लिए अरबों-खरबों रूपये लगाने के बाद भी अत्याधुनिक तकनीक को पकड़ पाना मुश्किल है।

देश में फैब्रिकेशन की कमी

भारत में ISRO और DRDO में सेमीकंडक्टर फाउंड्री उपलब्ध है पर केवल एक सीमित आवश्यकता की पूर्ति के लिए।

उत्साहवर्धक समाचार

विश्व में सेमीकन्डक्टर पर हो रहे आाधुनिक अनुसंधान व विकास के कार्यों में अग्रसर अनेक कम्पनियों में युवा भारतीय इंजीनियर व तकनीशियन कार्यरत हैं जो भारत के सेमीकंडक्टर मिशन में अपने अनुभव से बहुत बड़ा सहयोग दे सकते हैं। आने वाले वर्षों में इस क्षेत्र में विश्वविद्यालय व सैकड़ों इंजीनियरिंग कालेज से प्रशिक्षित युवा वर्ग को राष्ट्र में कार्य करने का अवसर मिलेगा।

भारत का स्वप्न निकट भविष्य में 5 ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था के लक्ष्य को प्राप्त करना है। सन् 2027-2028 तक 5 ट्रिलियन डॉलर की जी डी पी पर पहुँचने में सेमीकंडक्टर उद्योग बहुत बड़ा सहारा बन सकता है। आत्मनिर्भर भारत को समृद्ध बनाने में व राष्ट्र की सुरक्षा को मजबूत व साइबर धोखाधड़ी को समाप्त करने में सेमीकंडक्टर चिप्स मुख्य भूमिका निभाएंगे। आज भारत के लिए सेमीकंडक्टर फाउन्ड्री व फैब्रिकेशन ईकाईयों का बनना समय की आवश्यकता है।

पारितंत्र की कहानी

पकवानों का स्वाद

दिनेश चन्द्र शर्मा

एक था कौए का जोड़ा। नर का नाम काक था और मादा का नाम काकन। दोनों का रंग था एकदम काला और बोली इतनी कर्कश कि चुप ही रहें तो अच्छा। अन्य कौओं की तरह वे भी सर्वभक्षी थे। कभी कभी तो इतनी गंदी और सड़ी हुई चीजें खाते थे कि बस जी घृणा से भर जाए। दिनभर तरह तरह की ताजी, बासी और सड़ी-गली खाद्य वस्तुओं की फिराक में वे इधर-उधर उड़ते रहते थे।

एक दिन काक ने काकन से कहा, काकन, चलो जरा मानव बस्ती में चलकर देखते हैं कि लोगों ने अपनी रसोई में क्या-क्या पकाया है?

काकन ने भी हामी भरी, 'हाँ चलो वहीं चलकर देखते हैं।' दोनों मानव बस्ती की ओर उड़ चले।

जब वे मानव बस्ती के समीप पहुँच गए तो काक ने एक ओर इशारा करते हुए कहा, देखो उधर धुआँ उठता दिखायी दे रहा है और पकवानों की सुगंध भी आ रही है। लगता है वहाँ अच्छे-अच्छे पकवान बने हैं। चलो, वहीं चलकर देखते हैं।

काकन ने टोका, 'श्रीमान जी, वहाँ कहाँ जा रहे हो, जानते नहीं हो क्या, उस घर में आपको कुछ नही मिलेगा।'

काक ने पूछा, 'क्यों?'

काकन ने उत्तर दिया, 'भूल गए, अरे उस घर की गृहणी बड़ी चतुर बनती है। वह अपने घर में सभी खाने की चीजों को यहाँ तक कि पानी के बर्तनों को भी ढककर रखती है, कहती है कि खाने पीने की चीजों को खुला छोड़ने से बीमारियाँ फैलती हैं। इसलिए उस घर में हमें कुछ भी नही मिलेगा।'

काक ने सहमति व्यक्त की, 'बात तो तुम्हारी ठीक है काकन, मैं तो भूल ही गया था, लेकिन इसमें उसकी कोई गलती नही है। एक दिन मैंने देखा था कि गाँव की सारी महिलायें इकट्ठी बैठी थीं और एक अन्य महिला उन्हें यही सब बातें समझा रही थीं। सभी महिलायें उसे नर्स 'दीदी' कहकर संबोधित कर रही थीं और उसकी बातों को बड़े ध्यान से सुन रही थी।'

काकन ने उत्सुकता से पूछा, 'तो क्या कह रही थी वह 'नर्स दीदी'?'

काक ने उत्तर दिया, 'अरे काकन, वह तो उन महिलाओं को हमारे विरुद्ध भड़का रही थी।'

'ऐसा क्या कहा उसने?' काकन ने जिज्ञासा से पूछा।

काक ने उत्तर दिया, 'कहा तो उसने बहुत कुछ था लेकिन मुझे तो बस इतना ही याद रहा कि उसने समझाया था। सभी महिलायें अपने घरों में खाने पीने की चीजें ढक कर रखें। उनको कोई भी

पशु-पक्षी या मक्खी-मच्छर आदि छू भी न लें अन्यथा उनमें गंदगी के कीटाणु मिल जायेंगे और घर में बीमारियाँ फैलेंगी। तभी से गाँव की अधिकतर महिलायें अपने घरों में खाने पीने की चीजों को ढक कर रखने लगी हैं।'

काकन ने गुस्से से कहा, 'इसका मतलब है कि बहुत खराब महिला है ये नर्स दीदी, हमारे पेट पर लात मार कर भला इसे क्या मिलेगा?'

काक ने कहा, 'अरे काकन क्यों चिंता करती हो, उसकी बातें कौन सी कोई बस्ती की सारी महिलायें मानती हैं। आज भी बस्ती की कई महिलायें खाने पीने की चीजों को खुला छोड़ देती हैं। हाँ, यह तो सच है कि उनके घरों में बीमारियाँ भी खूब फैलती हैं लेकिन हमें तो गली-सड़ी चीजों के साथ-साथ कभी-कभी ताज़े पकवानों का स्वाद भी मिल ही जाता है।'

काकन ने कहा, 'उधर देखो, उस घर से भी धुआँ उठ रहा है और उस घर की गृहणी भी बहुत अच्छी है। वह अपने घर में खाने पीने की चीजों को कभी ढक कर नहीं रखतीं भले ही उसके घर में बीमारियाँ फैलती रहती हैं। वहाँ हमें जरूर कुछ न कुछ खाने को मिल जाएगा।'

काक ने कहा, 'हाँ चलो वहीं चलते हैं, वहाँ से भी पकवानों की सुगंध आ रही है।'

दोनों उस घर की छत की मुंडेर पर जाकर बैठ गए और कांव-कांव करने लगे। गृहणी रसोई घर में कुछ काम कर रही थी। दोनों फिराक में थे कि गृहणी रसोई से बाहर आये और वे अन्दर जाकर पकवानों पर हाथ साफ करें। कांव-कांव की आवाज़ सुनकर गृहणी अपने आप से कह रही थी, 'आज कौआ बोल रहा है, लगता कोई मेहमान आने वाला है।' वह खुश होकर अपने काम में लग गयी। काक और काकन ललचाई दृष्टि से रसोई की ओर देखते हुए कांव-कांव करते रहे।

अचानक गृहणी को रसोई के कार्यों के लिए पानी की आवश्यकता हुई और वह आँगन में लगे हैण्डपम्प पर पानी लेने चली गयी। उसकी रसोई भी खुली थी और खाने-पीने की चीजें भी बिना ढके रखी हुई थीं। बस फिर क्या था, काक और काकन दोनों रसोई में घुस गए और जल्दी-जल्दी खाने की विभिन्न चीजों में चोंच मारकर उनका स्वाद लेने लगे। जब तक गृहणी वापिस आती तब तक वे दोनों बढ़िया दावत उड़ा चुके थे। गृहणी के वापिस आने की आहट होते ही वे दोनों कुछ चीजें अपनी चोंच में दबाकर वहाँ से उड़ भागे।

'अस्पताल' नवजीवन का मातृ स्थल भी है

डॉ. अरुण कुकसाल

'...हर बार डाक्टर शराब न पीने की बात करते थे (जबकि, वास्तविकता यह है कि, मैंने जीवन में कभी भी शराब भूलवश भी नहीं पी है।) आज मुझे लगता है और आश्चर्य भी होता है कि अपनी मूल बीमारी के प्रारम्भिक वर्षों में लगभग 15 डाक्टरों की जांच से मैं गुजरा था, प्रत्येक ने शराब न पीने की सलाह दी थी, लेकिन किसी ने भी लिवर फंक्शन टेस्ट कराने की सलाह नहीं दी! हल्द्वानी के एक प्रतिष्ठित डाक्टर द्वारा घोषित अल्सर की बात सब ने पकड़ी थी। मैं निरंतर अल्सर की दवाई खा रहा था, जिसने भीतर-ही-भीतर मेरी हालत खराब कर दी थी। इस बात से वर्षों तक मैं अनभिज्ञ रहा और जो मर्ज था ही नहीं, उसकी दवाइयां खाता रहा, जिससे निश्चित तौर पर मेरे शरीर की हालत बिगड़ चुकी थी। इसके लिए मैं निश्चित रूप से उस दौरान मेरी चिकित्सा हेतु संपर्क में आए चिकित्सकों को दोषी मानता हूं।' (पृष्ठ-45)

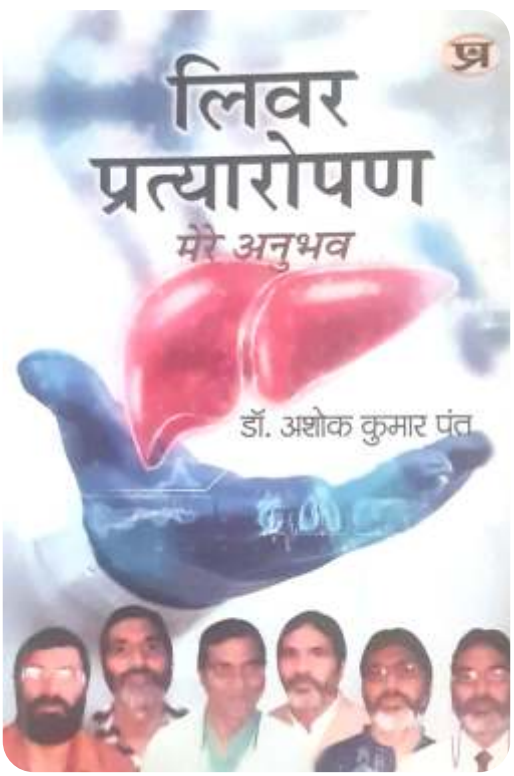

'लिवर प्रत्यारोपण - मेरे अनुभव' मेरे 23 वर्षों के संघर्षपूर्ण, किंतु सफलतम जीवनकाल का छोटा सा आख्यान है। इसे आमजन के सम्मुख प्रस्तुत करने का मेरा मंतव्य केवल इतना है कि इसे पढ़कर लोग अपने स्वास्थ्य के प्रति सजग और सतर्क तो रहे हीं जीवन के लिए संघर्ष कर रहे लोगों को यथासंभव अंगदान देकर नवजीवन भी दे सकें तथा इस भ्रांति का निराकरण हो कि दानकर्त्ता को अंगदान से कोई शारीरिक क्षति या असहजता होती है, ताकि आवश्यकता पड़ने पर अधिकतम लोग रक्तदान और अंगदान करने हेतु तत्पर हों। मैं स्वयं और मुझे अपने लिवर का अंशदान देने वाला मेरा पुत्र, दोनों ही एक स्वस्थ और संतुष्टिपूर्ण जीवन जी रहे हैं। इन 15 वर्षों में मैं अपने जीवन को पिछले 50 वर्षों के जीवन की तुलना में कहीं आगे देखता हूं। सच तो यह है कि प्रत्यारोपण के बाद जितनी शीघ्रता से मैंने स्वास्थ्य-लाभ पाया, उसने सचमुच मुझे एक आलौकिक ऊर्जा से अनुप्राणित कर दिया है। अब मुझे लगता है कि ईश्वर ने मुझे समाज के अन्य लोगों को अपने स्वास्थ्य के प्रति सजग करने तथा आमजन को रक्तदान और अंगदान देने हेतु प्रोत्साहित करने की दिशा देने का माध्यम बनाया है।' (पृष्ठ-36)

इस किताब के लेखक डॉ. अशोक कुमार पंत के उक्त दोनों वक्तव्यों के बीच उनके जीवनकाल के संघर्षों की गाथा है। साथ ही, यह किताब उनके इस जीवनकाल की विकटता की सुखद परिणिति की सफलतम कहानी है। इस किताब के बहाने, हमारे समाज और उसकी व्यवस्थाओं की गहनता से बहुआयामी पड़ताल भी उजागर हुई है। जिन्हें, जानना और समझना हर व्यक्ति के लिए अपेक्षित से कहीं अधिक अनिवार्य है।

'लिवर प्रत्यारोपण-मेरे अनुभव' पुस्तक में डॉ. पंत ने अपने अनुभवों और विचारों को 7 अध्यायों में व्यापकता और गहनता से अभिव्यक्त किया है। ये 7 अध्याय हैं- 'प्रारंभिक लक्षण और उपचारात्मक त्रुटियां', 'सिरोसिस का आक्रमण', 'चिंता और चिंतन', 'ऑपरेशन और एम.ओ.टी.यू.', 'चांद से जमीन पर', 'कुछ उपलब्धियां', 'पोस्ट लिवर ट्रांसप्लांट-मेरी जीवनचर्या'। डॉ. पंत ने अपने जीवन के विगत वर्षों के विविध पड़ावों की विश्लेषणात्मक जानकारी पाठकों को दी है। इसमें उद्देश्य यह है कि उनके निजी जीवन से उपजी ये जानकारियां सामाजिक शिक्षण और जागरूकता का माध्यम बने। निश्चित रूप

में वे इसमें सफल भी रहे हैं।

यह किताब देश-दुनिया में उन असंख्य लोगों की है, जो अभावग्रस्त व्यवस्थाओं और अज्ञानी चिकित्सकों के कारण अपने जीवन में अकारण ही आजीवन कष्ट भोगने को अभिशप्त हो जाते हैं।

जब जीवनीय संघर्षों की आहटों ने सचेत करना शुरू कर दिया तब स्वाभाविक रूप में उसके बाद से उनकी दिनचर्या ने उपलब्ध एवं समुचित चिकित्सकीय सुविधाओं और सलाहों के अनुसार नया आकार लिया। परन्तु, वर्षों तक चिकित्सकीय और उपचारात्मक त्रुटियों के दुष्परिणामों को अपने जीवन में बे-वजह सहन किया। देर से ही सही चिकित्सकीय लापरवाही का यह क्रम 4 जनवरी, 2009 को थमा जब उन्होने 'लिवर प्रत्यारोपण' ऑपरेशन का सफल मुकाम हासिल किया।

लेखक के शब्दों में इतने वर्षों से चली आ रही तकलीफ का राज खुल गया कि मुझे अल्सर है ही नहीं। मैं लिवर की गंभीर बीमारी से गुजर रहा था। मुझे लिवर सिरोसिस एवं पोर्टल हाइपरटेंशन था, जो अत्यंत गंभीर तथा लाइलाज स्थिति जैसा था। पूर्व में सही बीमारी का पता न चलने तथा गलत इलाज होने के कारण अब मौत मेरे दरवाजे खटखटा रही थी। मैंने जूस पीने से इनकार कर दिया था, क्योंकि पूर्व डायग्नोसिस के आधार पर मुझे डायबिटिक घोषित किया गया था। इन वर्षों में मेरी स्थिति अत्यंत खराब हो चुकी थी। पिथौरागढ़ और हल्द्वानी के डाक्टरों ने अपने अल्प-ज्ञान से मुझे यहां तक पहुंचा दिया था। मेडिकल सुविधाओं का अभाव, क्षेत्र का पिछड़ापन, अज्ञानता और लापरवाही पहाड़ों में कितनों की जान की दुश्मन बनी हुई है। वहां जाकर मुझे पता चला कि मैं डायबिटिक नहीं हूं। आज मैंने लगभग 4 साल बाद पुन: मीठा लेना आरम्भ कर दिया था। (पृष्ठ-53)

'...'मौत' शब्द मस्तिष्क में दूर-दूर तक भी नहीं आया, केवल कर्तव्य व समन्वय ही मुझे खींचता गया और मुझे लगा कि अभी मेरे मन-मस्तिष्क में उलझनों से ग्रसित विचारों का पानी हिल रहा है, धीरे-धीरे पानी शांत होगा तथा अपने-अपने घनत्व के अनुसार सभी चीजें क्रम से रुकेंगी और तब यह मिश्रण शायद सुंदर दिखाई पड़े!' (पृष्ठ-63)

वास्तव में, यह किताब आज की दंभभरी सामाजिक व्यवस्थाओं में एक सामान्य व्यक्ति की वास्तविक स्थिति और उसके असाधारण संयम, सकारात्मकता एवं साहस से हासिल स्फूर्तिदायक नवजीवन से पाठकों का साक्षात्कार कराती है।

इस किताब के प्राक्कथन में डा. राकेश बलूनी ने लिखा है कि 'अस्पताल एक दर्दभरी कहानियों की किताब है।' और, इसे प्राप्त करने के लिए जरूरी है जीवन जीने के प्रति दृढ़-इच्छाशक्ति जो लेखक के व्यक्तित्व में नैसर्गिक तौर पर जीवंत रही है-

'डॉ॰ बोले-'वेरी गुड पेशेंट', मुझे हंसी आ रही थी कि पेशेंट भी क्या वेरी गुड! दरवाजे के भीतर प्रवेश करते ही मैं एक नई दुनिया में पहुंच गया था। मैंने कहा कि आप लोग फिर कभी इस ऑपरेशन थिएटर में तो घुसने नहीं देंगे। मैं आया हूं तो एक बार सब चीजें देखना व समझना चाहता हूं, फिर कहां मौका मिलेगा? डाक्टर व अन्य लोग यह सुनकर आश्चर्य में पड़ गए कि जिसकी जिंदगी अंतिम चरण में हो, सब कुछ अनिश्चित हो, उसे यह सूझ रहा है! लेकिन डाक्टर साहब ने मेरी बात मानी और मेरे अनुरोध पर सारे उपकरणों और मशीनों के बारे में संक्षेप से समझाया। सामने खिड़की से दिल्ली का मनोहारी दृश्य दिखाई पड़ रहा था। मैं स्वयं को एक वी.वी.आई.पी. महसूस कर रहा था।' (पृष्ठ-109)

यह किताब जीवन की जटिलताओं को 'परे हट' कहकर जीवन को सार्थक रूप में जीने की ओर प्रेरित करती है। जीवनीय विसंगतियों से उभरकर जीवनीय व्यवहारिता को अपनाने के कई प्रसंग इस पुस्तक में हैं यथा लेखक के शब्दों में-

'...क्या मेरे लिए इतनी महंगी जिंदगी की कोई सार्थकता है? क्या मैं अपने परिवार के लिए, समाज के लिए सार्थक हूं? यदि मैं ऑपरेशन न कराऊं तो भविष्य में बच्चे व समाज कहेगा कि पैसे खर्च न करने के कारण जवान व्यक्ति को नहीं बचाया गया और यह आक्षेप सीधे मेरी पत्नी पर लगेगा और उसे कोसा जायेगा। मन ने कहा कि नहीं, उसे आक्षेपों का शिकार न बनाया जाए। मन बोल उठा कि तेरी अभी जरूरत है।' (पृष्ठ-90)

यह किताब बड़ी खूबसूरती से बताती है कि हमारा इस जीवन में होना हमारे पिता के होने से है। हमारे मध्यमवर्गीय समाज में 18 वर्ष की आयु के उपरान्त भी सन्तानों को बच्चा समझने की परिपाटी है। परन्तु, वास्तविकता यह नहीं है। लेखक अशोक के पुत्र शिवाशीष ने यह कर-दिखाया है। 4 जनवरी, 2009 को 18 वर्ष 6 माह के वय किशोर शिवाशीष का डाक्टर से यह संवाद यही तो रेखांकित करता है-

'...डाक्टर ने उसे कुछ डराने का प्रयास किया था तथा डांटकर पूछा था, जानते हो, तुम लिवर दान कर रहे हो? पता है तुम्हें क्या होगा? क्योंकि शिवाशीष मेडिकल साइंस का विद्यार्थी था तथा मैंने उसे लिवर ट्रांसप्लांट के लिए तैयार कर दिया था, अत: उसने पूरे आत्मविश्वास भरे स्वर में उत्तर दिया- मैं मेडिकल का छात्र हूं और

मैंने एनाटॉमी पढ़ी है। हां, मैं, जानता हूं कि मेरे लिवर का एक हिस्सा काटकर पापा के लिवर के स्थान पर लगा दिया जाएगा, क्योंकि लिवर में पुनर्जनन की क्षमता होती है, अत: कुछ ही दिन में मेरा लिवर पूरा बन जाएगा। डोनर के आत्मविश्वास भरे स्वर के कारण साइकेट्रिस्ट ने तुरंत ओ.के. कर दिया।' (पृष्ठ-96)

इस किताब का एक मजबूत पक्ष यह भी है कि इसने समाज के तथाकथित शुभचिन्तकों की पोल खोली है। अधिकांशतया, विपदा में आये व्यक्ति के साथ होने वाले सामाजिक व्यवहार बहुत ही कष्टकारी और कभी-कभी तो अमानवीय भी होते हैं। सामान्य अनुभव बताते हैं कि ज्यादातर परिचित लोग औपचारिकता, उत्सुकता, जानकारी प्राप्त करने और अपनी सलाह देने के लिए मरीज से मिलने आते हैं। उनको मरीज को अपनी उपस्थिति को दिखाना भर होता है। मुश्किल यह है कि ये लोग मरीज से ही उसकी कहानी सुनना चाहते हैं। उनके लिए ये सब केवल एक सूचना है, जिसे अपने हिसाब से अन्य परिचितों में आगे प्रसारित करना वे अपना परम कर्तव्य मान लेते हैं।

निश्चित रूप में यह सामाजिक तरीका बदलना चाहिए। दु:ख में आर्थिक मदद करने की नि:संकोच सामाजिक परिपाटी नहीं है। हम सभी सुख के साथी हैं, दु:ख में मात्र कोरी सलाह देने के आदी हैं। अत: एक बीमार व्यक्ति और असहाय परिवार से कैसे बर्ताव किया जाना चाहिए? इसके लिए सामाजिक शिक्षण की बहुत आवश्यकता है। लेखक लिखते हैं-

'मुझे भीतर-ही-भीतर यह अनुभव हो रहा था कि विपत्ति में समाज की ओर देखना स्वयं को कमजोर करना है। स्वयं को देखा जाए तो व्यक्ति मजबूत होता है। मुझे इस बीच रवींद्रनाथ टैगोर की 'गीतांजलि' में आई कविता 'विपदा मोरे रक्खा करो' की ये पंक्तियां याद आ रही थीं- 'हे ईश्वर! विपत्तियों से मेरी रक्षा कर, यह भाव लेकर मैं तेरे द्वार पर नहीं आया हूं। विपत्ति भरी अंधेरी रातों में जब पूरी दुनिया मेरा उपहास कर रही हो तो मैं तनिक भी विचलित न होऊं, इतनी शक्ति देना मुझे।' वास्तव में मैं भी ईश्वर से यही प्रार्थना कर रहा था। शायद मेरी प्रार्थना सुनी जा रही थी और मैं रुग्णता की पराकाष्ठा, संसाधनों की विषमता, समाज का उपहास और भविष्य की प्रतिपल अनिश्चितता के दौर में स्वयं को खड़ा रख सका।' (पृष्ठ-81)

यह किताब इसलिए भी रोचक है कि इसमें कई उपयोगी और व्यवहारिक जानकारियां बेहद सरलता और सहजता से पाठकों तक पहुंचती हैं। बीमार व्यक्ति एवं उसके परिवार के साथ डाक्टर एवं अस्पताल प्रशासन के अनुकूलतम तारतम्य के कई पाठ इस किताब में मौजूद हैं। लीवर शरीर के 400 से अधिक कार्यों को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप में संचालित करता है। यह भी कि ट्रांसप्लांट के रोगी की अधिकतम आयु 10 वर्ष मानी जाती है। जिस मिथक को लेखक ने प्री एवं पोस्ट-ट्रांसप्लांट के कड़े मानकों को आत्मसात करके निर्मूल सिद्ध किया है। उल्लेखनीय यह भी है कि डॉ. पंत ने जीवनकाल के इस जटिल दौर में भी अपने पारिवारिक, व्यावसायिक और सामाजिक जिम्मेदारियों का निर्वहन निर्बाध रूप में जारी रखा। और, आज भी इनमें वे निरंतरता बनाये हुए हैं। यह किताब मानव जीवन में 'अनुशासित जीवन-शैली' की मजबूती से पैरवी करती है।

यह बेहद प्रसन्नता की बात है कि 4 जनवरी, 2024 को पुस्तक 'लिवर प्रत्यारोपण- मेरे अनुभव (सफल लिवर प्रत्यारोपण के 15 वर्ष)' के लोकार्पण के अवसर पर अपने लिवर का अंशदान करने वाले डा. शिवाशीष पंत को हेमवती नंदन बहुगुणा चिकित्सा शिक्षा विश्वविद्यालय की ओर से उत्तराखण्ड राज्य में अंगदान-महादान अभियान का ब्रांड एम्बेसडर घोषित किया गया। सामाजिक जागरूकता के दृष्टिगत यह एक सराहनीय और अभिनव पहल है।

सार रूप में कहा जा सकता है कि लेखक के जीवनीय अनुभवों पर लिखी पुस्तक 'लिवर प्रत्यारोपण-मेरे अनुभव' चिकित्सा विज्ञान और सामाजिक जागरूकता के प्रति एक संदर्भ और मार्गदर्शी दस्तावेज के रूप में सार्वजनिक हुई है। इस किताब के कई अपने-अपने किरदारों में भावनात्मक एवं अपनी विषय विशेषज्ञता के उच्चतम समर्पण से समाजोपयोगी बना दिया है। पुस्तक में वर्णित हर पात्र का रोल काबिले तारीफ है और वास्तविकता यही है कि समर्पित एकजुटता ही हमारे समाज को जीवंत बनाये रखती है।

पुस्तक- लिवर प्रत्यारोपण- मेरे अनुभव (सफल लिवर प्रत्यारोपण के 15 वर्ष)
लेखक- डॉ. अशोक कुमार पंत
प्रथम संस्करण-2024, पृष्ठ- 192
मूल्य- Rs. 400
प्रकाशक- प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली

मस्तिष्क में चिप

30 जनवरी, 2024 को 29 वर्ष के नोलैड अर्बोध और टेस्ला के मालिक एलन मस्क ने एक्स पर एक ब्लॉग के द्वारा चिकित्सा क्षेत्र में क्रांतिकारी बदलाव की जानकारी दी। मस्क ने अपने व्यक्तव्य में लिखा कि उनकी 2016 में स्थापित कंपनी 'न्यूरोलिंक' ने सफलता पूर्वक मस्तिष्क में कंप्यूटर चिप को स्थापित कर दिया है जो वर्तमान में उनके लकवे से संबंधित अपंगता को दूर करने में सहायक होगी। मस्क ने बताया कि मानव मस्तिष्क के मोटर फंक्शन या गति से संबंधित क्षेत्र में एक पाँच रुपये के सिक्के के आकार की चिप को मनुष्य के बाल से 20 गुना अत्यंत पतले पालीमर के 64 नम्य धागे जो 1024 स्थलों पर मस्तिष्क के सिग्नल को ग्रहण कर, बिना वायर की सहायता से कंप्यूटर में प्रेषित करते हैं और कंप्यूटर को मानव मस्तिष्क में उठने वाले विचारों से अवगत करा कर, जो अंग कार्य नहीं कर रहे हैं, उनका कार्य कम्प्यूटर से कराते हैं। मस्क ने चिप को 'लिंक' और पूरी आदान-प्रदान प्रक्रिया को 'टेलीपैथी' नाम दिया। यह ब्रेन-कंप्यूटर इन्टरफेस या मस्तिष्क कंप्यूटर अंतराफल के क्षेत्र में बहुत बड़ी सफलता का आगाज है। इसके पूर्व आस्ट्रेलिया की एक कंपनी संक्रोन ने जुलाई, 2022 में एक अमेरिकन के मस्तिष्क में बिना सर्जरी के चिप स्थापित करने में सफलता पायी थी। इसका नाम ब्रेनगेट दिया था। इसमें स्टेंट रोड नामक सूक्ष्म उपकरण को मनुष्य की छाती रिसीवर ट्रांसमीटर लीड से जोड़ कर वायरलेस तरीके से मस्तिष्क के सिग्नलों या डेटा को बाहरी कंप्यूटर पर भेजता है। संक्रोन इस दिशा में सन् 2010 से प्रयत्नशील है और शुरुआत इसका परीक्षण भेड़ों पर हुआ था। इस उपकरण की कल्पना थॉमस ऑक्सले ने की थी व बनाया इंजीनियर निकोलेस ओपी ने। जहाँ तक कार्यक्षमता का सवाल है 'ब्रेनगेट', 'लिंक' से अधिक सक्षम है।

मस्क को मानव पर परीक्षण करने की अनुमति मई, 2023 अमेरिकन सरकार द्वारा दी गई। इसके शुरूआती परीक्षण बंदर, भेड़ और सुअरों पर होने के पश्चात् मनुष्य पर हुए। यह चिप चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में बहुत बड़ी क्रांति करने वाली है और कई असाध्य बीमारियों यथा लकवा, अंधापन, पार्किंसन, डिमेंशिया, मस्तिष्क आघात, मिर्गी, स्पाईनल कार्ड की चोट, लगातार चलने वाले दर्द इत्यादि का सफलता पूर्वक निदान करने में सक्षम होगी। फिलहाल तो इसका कार्य क्षेत्र लकवे तक ही सीमित है। इसके शोध पर विभिन्न उद्यमों द्वारा अरबों डॉलर खर्च हो चुके है। एलन मस्क ने

इसकी कार्य प्रणाली पर लिखा कि यह 'न्यूरान स्पाइक' तंत्रिकोशिका को उत्तेजित करके सिग्नल को भेजते हैं। अब इसका बड़े पैमाने पर मानव के ऊपर परीक्षण (क्लीनिकल ट्रायल) होना है। उसी के पश्चात् अगर सफलता मिलती है तो अगले 5 से 10 साल के मध्य यह आम लोगों को उपलब्ध हो पायेगी। चिप के माध्यम से अंधत्व निदान का प्रयास होगा।

एलन मस्क ने 20 फरवरी, 2024 को घोषणा की, कि न्यूरालिंक द्वारा मानव मस्तिष्क में आरोहित चिप ने मस्तिष्क को भेजे हुए सिग्नलों से कम्प्यूटर ने माउस को संचालित कर कई घंटे शतरंज खेली परन्तु बाद में यह खबर भी आयी की पालीमर के धागे मस्तिष्क में ढीले हो गए हैं, जो बाद में प्रोग्रामींग के द्वारा ही ठीक कर लिए गए हैं।

मस्क की घोषणा के पश्चात् इस सफलता पर लोगों ने आपत्तियाँ लगाना भी शुरु कर दिया यथा इस परीक्षण से जानवरों के साथ अमानवीय व्यवहार किया गया, वे मारे गए, वे लकवा ग्रस्त या स्थायी अपंगता के शिकार हुए। मस्क ने इन सब आरोपों को नकारा है। इसके अलावा अन्य आपत्तियों में क्या चिप स्थायी रहेगी या बदलनी पड़ेगी, इस ट्रांसप्लांट में कितना खर्चा आयेगा, नैतिक दृष्टि से मस्तिष्क के साथ छेड़-छाड़ कहाँ तक उचित है, मानव शरीर पर अगर ऑपरेशन असफल या आंशिक रूप से सफल हो पाता है कितना दुष्प्रभाव पड़ेगा, क्या मस्तिष्क चिप को स्थायी रूप से स्वीकार करेगा। बार-बार कम्प्यूटर द्वारा दिमाग को उत्तेजित करने का क्या दुष्प्रभाव पड़ेगा और सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न यह उठ रहा है कि अगर मस्तिष्क कम्प्यूटर द्वारा संचालित हो रहा है और अगर

कम्प्यूटर हैक हो जाता है तो उससे कैसे बचा जा सकता है। कंप्यूटर हैक हो जाने की दशा में अगर मस्तिष्क के सिग्नलों का गलत इन्टरप्रिटेशन करवाकर आवांछनीय कार्य करवाया जाता है तो उसके लिए जिम्मेदारी किसकी होगी? टेक्नोलॉजी हमेशा से दुधारू तलवार रही है और अगर चिप स्थापन का दुरूपयोग होता है, जिसकी काफी अधिक संभावना है, तो उसके लिए कौन उत्तरदायी होगा? ऐसे अनेकों प्रश्न है जिनका समाधान खोजा जा सकता है यथा चिप को इस तरह बनाया जाय कि उसका कार्य सीमित हो। क्या मनुष्य में एक चिप से काम चलेगा या कई चिप लगानी पड़ेगी? यह भी एक अहम प्रश्न है।

मनुष्य की बौद्धिक क्षमता जो कंप्यूटर में जा रही है उस डाटा पर किस का अधिकार होगा, जो डाटा भेज रहा है उसका या जो कंप्यूटर को अदृश्य रूप से कंट्रोल कर रहा है उसका क्योंकि सारी प्रणाली इन्टरनेट द्वारा संचालित होगी। इन सब के बावजूद एक उम्मीद का संचार सुखद भविष्य की ओर होगा ऐसी पूरी संभावना है।

विज्ञान समाचार–2

प्रधानमंत्री सूर्य घर योजना: मुफ्त बिजली योजना

13 फरवरी, 2023 भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने एक बहुत ही महत्वकांक्षी योजना की घोषणा की, जिसके तहत 1 करोड़ परिवारों को मुफ्त 300 वाट तक सौर ऊर्जा पर आधारित बिजली देने की है। इस योजना के बारे में वित्तमंत्री श्रीमती निर्मला सीता रमण ने बजट में उल्लेख किया था। इस योजना का मुख्य पहलू यह है कि 1 करोड़ घरों में घर की छत पर सोलर पैनल लगा कर प्रति परिवार 300 यूनिट बिजली प्रतिमाह देना। इस योजना के सफल क्रियान्वयन के लिए 75021 करोड़ का बजट निर्धारित किया गया है तथा प्रति 2 किलोवाट तक 30000 रूपये की सब्सिडी का प्रावधान किया गया और अगर इसके आगे या अधिक बिजली की आवश्यकता है तो यह 10 किलोवाट तक रु. 18000/– प्रति किलोवाट होगी। अधिकतम सब्सिडी 10 किलोवाट तक 78000 रूपये होगी। अगर कोई तीन किलोवाट का सौर ऊर्जा का उत्पादन करना चाहता है तो वर्तमान में इसकी लागत 1.7 लाख से 1.8 लाख तक होती है। केन्द्र सरकार की सब्सिडी और वास्तविक लागत के बीच का अन्तर कुछ हद तक राज्य सरकार द्वारा सब्सिडी देकर आंशिक रूप से पाटा जायेगा। उत्तराखण्ड सरकार अपनी ओर से 51000 की सहायता प्रति 3 किलोवाट पर देगी शेष अन्तर की राशि बैंकों द्वारा उपलब्ध कराये जाने वाले आसान शर्तों वाले ऋण से पूर्ति की जायेगी। तात्पर्य यह है कि बहुत कम लागत पर हमें हमेशा बिजली मिलती रहेगी। एक किलोवाट के सौर पैनल से प्रतिदिन 4–5 यूनिट बिजली का उत्पादन होता है, इस तीन किलोवाट का सोलर पैनल कम से कम 12 यूनिट बिजली का उत्पादन करेगा। यह सौर ऊर्जा से उत्पादित बिजली ग्रिड का पार्ट बनेगी। अगर किसी के घर आवश्यकता से

अधिक बिजली का उत्पादन है तो पावर वितरण वाली कम्पनियां तीन माह के अंतराल के पश्चात बिजली का पैसा बिजली देने वाले के खाते में आ जायेगा।

यह योजना कई उद्देश्यों की एक साथ पूर्ति करती है, यथा भारत सरकार की प्रतिबद्धता है कि सन 2070 भारत में कार्बन उत्सर्जन शून्य हो जायेगा यानि कि पेट्रोल, कोयले और अन्य पदार्थों जो कार्बनडाइआक्साइड की मात्रा वातावरण में बढ़ाते हुए उसे शून्य पर लाना। दूसरा, आजकल हर राजनैतिक दल चुनाव के वक्त बिजली फ्री देने की घोषणा करता है, जिसके कारण सरकारी खजाने पर भारी दबाव पड़ता है। सूर्य घर योजना से यह स्थिति स्वत: समाप्त हो जायेगी। तीसरा, भारत सरकार का 500 गीगावाट ऊर्जा का उत्पादन सन 2030 तक की योजना है जो कि मुख्य रूप से सौर और पवन ऊर्जा पर आधारित है। उसे अमली जामा पहनाने में काफी कारगार होगी। इस योजना के अन्तर्गत 1000 अरब वाट बिजली का उत्पादन प्रतिवर्ष होगा, जो वातावरण को प्रदूषण मुक्त रखेगा। अभी तक भारत में अधिकांश बिजली उत्पादन कोयले को जलाने से होता है, इसे थर्मल पावर कहते है। इससे वातावरण में कोयले को कार्बनडाईआक्साइड, सल्फर डाइआक्साइड, मिथेन जैसी गैस का उत्सर्जन होता है, इनसे वायु प्रदूषित होती है। इसके अलावा कोयलेको जलाने से राख भी उत्पन्न होती है, उत्पन्न राख का समुचित समाधान निकलना शेष है।

आर्थिक दृष्टि से भी सूर्यघर योजना काफी लाभकारी है, एक तापीय मेगावाट विद्युत संयत्र लगाने की लागत 3-7 करोड़ है और सूर्य घर से अधिकतम 30 गीगावाट की क्षमता होगी। एक गीगावाट एक अरब वाट के बराबर होता है। इस योजना के अन्तर्गत यह अनुमान लगाया गया है कि प्रतिवर्ष सूर्य घर योजना से 1000 अरब यूनिट बिजली का उत्पादन अगले 25 वर्ष तक होता रहेगा और इससे करीब 17 लाख व्यक्तियों को काम मिलेगा। इस प्रकार 30 गीगावाट के निर्माण की लागत 18000 करोड़ होगी जो सूर्य घर योजना से 2.5 गुना अधिक है, परन्तु इसमें परिचलन खर्चा न के बराबर होने के कारण एक वर्ष के अन्दर निवेश राशि निकल आएगी। यह सूर्य घर संयत्र की आयु 25 वर्ष होने से भविष्य के लिए बहुत लाभकारी है।

भारत समुद्रयान 6000

भारत प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में तेजी से अपने पैर पसार रहा है, क्षेत्र चाहे नभ हो या जल हो या थल हो। आज हमारे मिशन आर्कटिक और अंटार्कटिक में सफलता पूर्वक काम कर रहे है, गगन यान, चंद्रयान की सफलताओं के बाद अब समुद्र की बारी है और इसके लिए भारत अपने प्रारंभिक प्रयास में ऐसी पनडुब्बी तैयार कर रहा है जो समुद्र की 6000 मीटर गहराई तक की तलहटी का वैज्ञानिक सर्वेक्षण करेगी। इसमें चालक के अलावा 2 से तीन वैज्ञानिकों को एक साथ कार्य करने के लिए सुविधा होगी। इस पनडुब्बी का नाम 'मत्स्य 6000' रखा गया है। यह पनडुब्बी अभी अपनी निर्माणाधीन अवस्था में है तथा वर्ष के अन्त तक यह पनडुब्बी अपना वैज्ञानिक कार्य शुरू कर देगी। इस पनडुब्बी का निर्माण सन 2021 में शुरू हुआ था।

आम धारणा के विपरीत समुद्र की सतह बजाय सपाट होने के उसी प्रकार की आकृति की है जिस प्रकार महाद्वीपीय धरती। इसके अन्दर पहाड़, फव्वारे, वादियाँ, घाटियाँ, मैदान यानी सभी तरह की स्थलाकृति होती है। समुद्र की अधिकतम गहराई 10916 मीटर फिलीपिंस के पूर्व में मेरीनास ट्रेच की तलहटी में नापी गयी है। इतनी गहराई पर पानी अकल्पनीय दबाव डालता है जो कि करीब 1150.00 किलोग्राम प्रति वर्ग सेन्टीमीटर होता है। इस दबाव को सहने वाला उपकरण काफी लागत से निर्मित होता है। मत्स्य 6000 करीब 6200 किलोग्राम प्रति वर्ग सेंटीमीटर पर कार्य करने में सक्षम होगी। समुद्र तल का अधिकांश भाग इसी गहराई तक का होता है इसे अब अबयसल प्लेन या वितल मैदान कहते हैं।

समुद्र की तलहटी कई कारणों से दिन प्रतिदिन महत्वपूर्ण होती जा रही है। समुद्र से मछलियों के उत्पादन के अलावा, पेट्रोलियम गैस एवं बहुमूल्य खनिज यानी कि तांबा, मैगनीज, फास्फेट, निकल के अयस्क, श्वेत-श्याम खनिज युक्त उष्ण जल के फव्वारे, विशाल पैमाने पर ऊर्जा का स्रोत गैस हायड्रेट, हमारे देश में थोरियम के भंडार, खारे जल को परिष्कृत कर पीने योग्य पानी का बड़े पैमाने पर कई देशों में उत्पादन जैसी आर्थिक महत्व की वस्तुएं उपलब्ध होती है। इसके अलावा समुद्रीय जल और तलहटी का वैज्ञानिक अध्ययन भी बहुत महत्वपूर्ण है। समुद्र की तलहटी में पानी का तापमान 1.5° से 2.0° सेन्टीग्रेड होता है जबकि उपरी भाग का तापमान काफी अधिक होने से बिजली उत्पादन की संभावना भी है।

वर्तमान युग और आने वाले समय में समुद्रों के आर्थिक, भौगोलिक, वैज्ञानिक एवं राजनैतिक महत्व में उत्तरोत्तर वृद्धि होती रहेगी। इसलिए अपने हित सुरक्षित करने की दिशा में मत्स्य 6000 जैसे प्रयास अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बहुत ही आवश्यक हैं।

विज्ञान समाचार–4

एम आय आर वी अग्नि मिसाइल का सफल परीक्षण

10.5 मीटर लम्बी, 1.15 मीटर व्यास और 5500 किलोग्राम वजनी अग्नि–5 मिसाइल का हाल में सफल परीक्षण की खुशखबरी सर्वप्रथम प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने 'एक्स' के जरिए दी। इसे राष्ट्रपति श्रीमती द्रौपदी मुर्मू ने आत्म निर्भर भारत की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम बताया और उम्मीद करी कि देश अब और सुरक्षित हो रहा है। यह मिसाइल आवाज की गति, 360मी/सेकण्ड, से 24 गुना अधिक तेजी से चलती है। पूर्णत: स्वदेशी तकनीकी पर आधारित यह मिसाइल 5000 किलोमीटर से अधिक दूरी पर एक साथ दस विस्फोटकों जिनमें परमाणु, पारम्परिक और रासायनिक भी हो सकते हैं, एक साथ ले जाकर अलग–अलग स्थल पर प्रहार अचूकता के साथ कर सकती है। इस मिसाइल के विकास से भारत आज अमेरिका, रूस, चीन, फ्रांस और इंग्लैण्ड के समकक्ष हो गया है। यह मिसाइल डीआरडीओ यानि रक्षा अनुसंधान और विकास संगठन के कई उपक्रमों द्वारा बनायी गयी है। यह एमआईआरवी यानी एकाधिक स्वतंत्र रूप से लक्षित पुन: प्रवेश वाहन प्रणाली की एक्सोएटमॉस्फेरिक बैलेस्टिक मिसाइल पेलोड है जो हर तरह बम ले जाने में सक्षम है।

भारत में मिसाइल के निर्माण का इतिहास विश्व में काफी पुराना है। अंग्रेजों से लड़ने के लिए मराठों और मुस्लिम शासकों ने अपने–अपने उद्देश्यों के अनुसार मिसाइलों का निर्माण कराया था। आधुनिक मिसाइल सन् 1920 में पहली बार निर्मित हुई और एमआरआरवी श्रेणी की मिसाइल अमेरिका में सन् 1968 में अस्तित्व में आई थी। भारत में मिसाइल का निमार्ण 1980 के दशक में शुरू हुआ था। भारत आज हर तरह की मिसाइलें अपने बलबूते पर बना रहा है। सबसे कम दूसरी वाली एन्टी टेंक मिसाइल जो 1.6 किलोमीटर तक मारक क्षमता रखने से 5500 किलोमीटर से अधिक इन्टरकान्टिनेंटल मिसाइल तथा एन्टी सेटलाइट मिसाइलें शामिल है अग्नि–6 जो 10000 किलोमीटर से अधिक दूरी की मारक क्षमता वाली होगी वह अभी निर्माणाधीन है।

डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने इस प्रकार की शस्त्र प्रणाली को 'दिव्यास्त्र' शस्त्र कहे थे। दिव्य पुत्री शीना रानी ने इस मिशन को सफलता के शिखर पर पहुँचा कर भारतीय महिला शक्ति का परिचय विश्व के सम्मुख रखा। शीना रानी के पूर्व जो पावर हाऊस आफ इनर्जी के नाम से जानी जाती है अग्नि पुत्री टेसी थामस ने भी अग्नि श्रेणी मिसाइलों के विकास की इमारत खड़ी करने में उच्च श्रेणी का योगदान दिया था। प्रोद्योगिकी क्षेत्र की एक और उत्साह प्रेरक खबर है कि भारत में सन् 2022–23 में एक लाख करोड़ रूपये से अधिक के रक्षा उत्पाद निर्मित किये थे और इसी अवधि में 16000 करोड़ से अधिक के उत्पाद निर्यात किये थे। भविष्य में रक्षा उत्पादन के निर्यात एक लाख करोड़ तक की संभावना है।

विज्ञान समाचार–5

अग्निकुल, अग्निबाण गौरवशाली उपलब्धि

हाल ही में 30 मई 2024 को श्री हरिकोटा स्टेशन से नव उद्यमी अग्निबाण ने अपने प्राइवेट लाँचपेड से एक अर्द्ध क्रायोजेनिक गैस एवं तरल ईंधन पर आधारित एवं त्रिआयामी प्रिंटेड एक एकल अंगी इंजन अग्निलैड का सफल प्रक्षेपण किया है। यह विश्व में इस तरह का प्रथम प्रयोग था जिसमें त्रिआयामी प्रिंटेड इंजन के रॉकेट को उर्द्धवाकार दिशा में मोबाइल लाँच पैड से अंतरिक्ष में भेजा गया। यह उपलब्धि निजी कम्पनी अग्निबाण द्वारा इसरो के और आई॰आई॰टी॰ मद्रास के सक्रिय सहयोग एवं प्रोत्साहन से संभव हुई है। इससे पहले यह कंपनी सन् 2020 से कार्यरत् थी और 4 बार असफलता हाथ लगने के बावजूद इसने अपना धैर्य नहीं खोया और विशिष्ट अतिथियों की उपस्थिति में सफल प्रक्षेपण किया। इस कम्पन्नी के मुख्य कार्यकारी अधिकारी श्रीनाथ रविचन्द्रन हैं जिन्होंने प्रारम्भ में दो करोड़ रुपये की लागत से व्यवसाय शुरू किया और धीरे–धीरे अन्य जगहों से धनराशि एकत्रित करके इस प्रयास को दो सौ इंजीनियरों एवं पचास वैज्ञानिकों की मदद से सफल बनाया। इस तकनीकी मदद से भविष्य में काफी कम खर्च में प्रक्षेपण संभव हो जायेगा। कम्पनी का मानना यह है कि आगामी वर्ष से स्पेस टेक्नोलॉजी में इसका व्यवसायिक उपयोग किया जा सकता है। कम्पनी की सफलता पर भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी एवं अन्य गणमान्य व्यक्तियों ने बधाई दी।

संकलन: विज्ञान परिचर्चा डेस्क

विज्ञान कविता: क्या, क्यों और कैसे ?

मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी

"विज्ञान कविता" शब्द प्रथम दर्शन में वास्तव में वदतोव्याघात का उदाहरण सा प्रतीत होता है। वदतोव्याघात माने एक दूसरे के विपरीत बात कहना। यदि हम ऊपर ऊपर से देखें तो सचमुच विज्ञान और कविता एक दूसरे से पूर्णत: असम्बद्ध वचन प्रतीत होते हैं। इस असम्बद्धता को स्पष्ट करने के लिये मैंने अपने विज्ञान कविता संग्रह "विज्ञान रस सीकर" की भूमिका में लिखा कि "एक तर्काधिष्ठित है, दूसरा भावनाधिष्ठित। एक बुद्धिगम्य है, दूसरा हृदयप्रसूत। एक प्रमाणापेक्षी है, दूसरा कल्पनाधारित। एक तत्त्वनिष्ठ है, दूसरा आनन्दनिष्ठ। एक शुष्क स्पष्टवादी है, दूसरा सरस चमत्कृतिप्रधान।" ऐसी स्थिति में विज्ञान कविता नाम की साहित्य की और विशेषकर कविता की कोई विधा वास्तव में हो सकती है अथवा नहीं यह प्रश्न विचारणीय हो जाता है। प्रस्तुत आगे की पंक्तियों में हम इसी विषय के कुछ पहलुओं पर चिन्तन करने जा रहे हैं।

इसके लिये उचित होगा कि हम सबसे पहले विज्ञान तथा कविता इन दोनों के स्वरूप को अलग-अलग समझ लें। तो आइये पहले विज्ञान की बात करें। जब हम विज्ञान शब्द का प्रयोग करते हैं तो सहज स्वाभाविक ढंग से हमारे सामने प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हुए परिवर्तन ही आते हैं। परन्तु प्रौद्योगिकी विज्ञान नहीं है। प्रौद्योगिकी को ही विज्ञान मानने की भूल के कारण ही विज्ञान मानव के लिये वरदान है या अभिशाप जैसे भ्रामक तर्क सामने आने लगते हैं। यह ठीक है कि कभी-कभी प्रौद्योगिक आविष्कारों के लिये वैज्ञानिक सिद्धान्त सहायक होते हैं और यह भी सत्य है कि कई बार प्रौद्योगिकी के कारण वैज्ञानिक सिद्धान्त प्रकट होते हैं फिर भी विज्ञान और प्रौद्योगिकी दो भिन्न विषय हैं। प्रौद्योगिकी का तात्पर्य है वे उपाय जो मनुष्य ने इस पृथ्वी पर अधिक सुख सुविधा पूर्ण जीवन बिताने के लिये किये। धूप लगती है इसलिए छाता या चलते समय काँटे गड़ते हैं इसलिये जूता खोजना भी प्रौद्योगिकी ही है। कुआँ, रहट, हँसिया, चाकू, कैंची, सुई, हल, मूसल, कपड़े, मकान, चूल्हा, तलवार, धनुष, गदा आदि सब प्रौद्योगिक आविष्कार हैं। इनका प्रारम्भ तो हम वर्तमान मानव अर्थात् 'होमो सेपियन्स' की उत्पत्ति के पहले से ही अर्थात् 'होमो हैबिलिस' के जमाने से ही हो गया था। परन्तु यह मूलत: विज्ञान नहीं है।

विज्ञान का अर्थ है प्रकृति के रहस्यों को समझने या मनुष्य के सामने उत्पन्न होनेवाली जिज्ञासाओं तथा कौतूहलों का उत्तर खोजने के लिये निरीक्षण तथा परीक्षण के आधार पर तर्कपूर्ण निष्कर्षों तक पहुँचना। जब मनुष्य ने अपने चारों ओर की प्रकृति को देखना और समझना चाहा तो उसे सामने दो मार्ग दिखे। एक सरल था और दूसरा कठिन। जनसाधारण सरल मार्ग पर जाते हैं परन्तु विचारक कठिन मार्ग पर। सरल मार्ग था आस्था और विश्वास का। उसके अनुसार यह सारी सृष्टि किसी महान् अमानुषी शक्ति ने निर्माण की है, उसी के बनाये नियमों के अनुसार चल रही है और जब उसकी इच्छा होगी तब वह इस खेल को समाप्त कर देगी। उस महान् शक्ति में प्रेम, स्नेह, क्रोध, स्तुति सुनकर प्रसन्न होना और विरोध करने पर रुष्ट होना ऐसे मानवोचित गुण भी होते हैं। इसलिये उसकी उपासना करनी चाहिये और विपत्ति आने पर उसे ही गुहार भी लगानी चाहिये। इसी मार्ग पर संसार भर में अनेकानेक धर्म, सम्प्रदाय, उपासना पद्धतियाँ, रूढ़ियाँ, परम्परायें, विधि-और इसीलिये वैमनस्य व संघर्ष उत्पन्न हो गये।

इसके विपरीत दूसरी बुद्धिवादी विचारधारा थी। उसके अनुसार संसार में हर कार्य के पीछे कोई न कोई तर्कसंगत कारण होता है। प्रकृति में सब कुछ निश्चित प्राकृतिक नियमों के अनुसार ही होता है। यदि कुछ अनहोनी भी दिखती है तो वह भी बिना कारण और अचानक नहीं हो सकती। इसलिये सृष्टि में चमत्कारों का कोई स्थान नहीं है। यदि हमें कुछ भी चमत्कार दिखता है तो उसका केवल इतना ही अर्थ है कि हम उसके पीछे का कार्य कारण भाव अभी तक समझ नहीं पाये हैं। ज्यों ही वह समझ में आ जायेगा चमत्कार समाप्त हो जायेगा। इस विचारधारा का ही नाम है वैज्ञानिक दृष्टिकोण। वैज्ञानिक दृष्टिकोण में आस्था का कोई स्थान नहीं होता। वैज्ञानिक दृष्टिकोण का मूल आधार है संशय। इसीलिये हर अगला व्यक्ति पिछले द्वारा बतायी गयी बात को पुन: जाँचना और परखना चाहता है और इसी आधार पर वैज्ञानिकता का विकास होता जाता है। पूर्वसूरि के प्रति सम्मान निश्चित रूप से होता है परन्तु नये नये प्रमाण खोजने या नये नये ढंग से विचार करने की प्रवृत्ति महत्त्वपूर्ण होती है। यह सही है कि समाज में गतानुगतिक आस्थावानों की बहुतायत होती है, विवेकशील विचारवानों की कम। परन्तु वैज्ञानिक दृष्टिकोण का प्रचार प्रसार करने वालों का यह निश्चित कर्तव्य है कि वे समाज में तर्कशुद्ध विचारों का प्रतिपादन करते रहें।

यहीं लोकप्रिय विज्ञान लेखन की भूमिका महत्त्वपूर्ण हो जाती है। विज्ञान के विभिन्न विषयों में शोध करने वाले, नवनवीन वैज्ञानिक सिद्धान्तों तथा उद्भावनाओं का प्रतिपादन करनेवाले

अथवा नवनवीन सम्भावनाओं पर चिन्तन करने वाले वैज्ञानिक बहुधा जनसामान्य से दूर कटे फटे होते हैं। इसका एक प्रमुख कारण तो यह है कि आज वैज्ञानिक सिद्धान्त इतने जटिल हो गये हैं कि जनसाधारण की उन तक पहुँच होना सम्भव नहीं। दूसरे भाषा के स्तर पर वैज्ञानिक इस प्रकार से व्यक्त नहीं हो पाते कि जनसामान्य उनकी कही बात को समझ सकें। कई बार तो वैज्ञानिक केवल गणित की भाषा में ही बात कर पाते हैं। भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, जीव विज्ञान आदि सबमें तकनीकी शब्दों का इतना गहन जाल है कि सामान्य व्यक्ति उधर जाना भी नहीं चाहेगा। हाँ, प्रौद्योगिकी का प्रयोग सभी करते हैं। हर एक के हाथ में स्मार्ट फोन है, सब रिमोट चलाते हैं, अधुनातन वाहनों में यात्रा करना पसन्द करते हैं परन्तु इन सभी प्रौद्योगिक आविष्कारों के आधारभूत जो वैज्ञानिक सिद्धान्त हैं उन्हें जानने या समझने की न उनमें कोई रुचि है और न ही वे उसकी आवश्यकता भी समझते हैं। परन्तु उन वैज्ञानिक तथ्यों की जानकारी यदि सरल तथा रोचक ढंग से कोई दे सके तो वे निश्चित रूप से उसकी तरफ़ आकर्षित होंगे और यह काम वैज्ञानिक नहीं कर सकते परन्तु लोकप्रिय विज्ञान लेखक कर सकते हैं। विज्ञान को रोचक तथा सरल बना कर प्रस्तुत करने की इस यात्रा का एकमात्र वाहन है विज्ञान साहित्य।

जब हम साहित्य की बात करते हैं तो साहित्य की सभी विधाएँ जैसे ललित निबन्ध, कहानी, उपन्यास, कविता, नाटक आदि लिखित तथा दृश्य रूप में अभिनीत तथा मंचित विधाएँ अनुस्यूत होती हैं। परन्तु यहाँ हम केवल एक विधा कविता की चर्चा तक अपने को सीमित रखते हैं। भाव तथा विचारों की लालित्यपूर्ण अभिव्यक्ति का नाम कविता है। यह अभिव्यक्ति भाषा के माध्यम से ही की जा सकती है। किसी भी भाषा में अभिव्यक्त होने के दो प्रकार हो सकते हैं। एक सरल सीधे तरीक़े से अपनी बात इस प्रकार कह देना कि जो कुछ कहा गया है वह सामने वाले की समझ में आ जाये। दूसरे तरीक़े में सामने वाले को तथ्य तो समझ में आ ही जाये परन्तु साथ ही साथ उसे सुनने या पढ़ने में आनन्द की भी अनुभूति हो। पहले प्रकार की अभिव्यक्ति को हम विज्ञान की भाषा कह सकते हैं तो दूसरा प्रकार साहित्य का है। इस साहित्यिक अभिव्यक्ति में यदि लय और नाद भी जुड़ जायें तो आनन्द और बढ़ जाता है। यही कविता है। इस कविता को यदि विज्ञान के सिद्धांतों तथा तथ्यों पर आधारित कर दिया जाये तो वह विज्ञान कविता हो जायेगी।

कविता बहुधा छंदोबद्ध होती है परन्तु केवल छंद में बँधी रचना है इसलिये वह कविता हो यह आवश्यक नहीं है। हम अनेक छंद में बँधी तुकबन्दियाँ पढ़ते हैं परन्तु शब्द समूहों को छंदों में बाँधा गया है केवल इस कारण किसी रचना को काव्य साहित्य नहीं माना जा सकता। प्राचीन काल में संस्कृत में लिखे गणित, आयुर्वेद, दर्शन, अध्यात्म या अन्य अनेक शास्त्रों की बातें छंदोबद्ध श्लोकों में ही कही जाती थीं परन्तु हम उन सबको कविता तो नहीं कहते। वे विज्ञान की भाषा में ही लिखी मानी जाती हैं। कोई रचना विज्ञान कविता केवल तब कही जा सकती है जब उसमें वैज्ञानिक निरीक्षण, परीक्षण आधारित तर्कपूर्ण निष्कर्ष सरस ढंग से प्रस्तुत किये गये हों। इस तत्त्व को और स्पष्ट रूप से कुछ उदाहरणों के माध्यम से रेखांकित किया जा सकता है। कभी कभी कवि के मन में भी नहीं होता कि वह विज्ञान कविता लिख रहा है। वह तो मूलत: एक कवि होता है जिसकी प्रतिभा काव्य धारा के सृजन में व्यस्त होती है परन्तु अनजाने में ही वह किसी वैज्ञानिक तथ्य को अनायास ही प्रकट कर जाता है। महाकवि जयशंकर प्रसाद के प्रसिद्ध काव्य 'आँसू' की निम्न पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं।

अवकाश असीम सुखों से आकाश तरंग बनाता।
हँसता सा छायापथ में नक्षत्र समाज दिखाता॥
नीचे विपुला धरणी है दुख भार वहन सी करती।
अपने खारे आँसू से करुणासागर को भरती॥

उस काल तक यह वैज्ञानिक धारणा थी कि अवकाश (स्पेस) में ईथर नामक पदार्थ की तरंगें चलती रहती हैं (अब यह धारणा नहीं है)। कवि ने उन ईथर तरंगों का आकाश तरंग के रूप में अत्यन्त मधुर वर्णन किया है। यह स्पष्ट है कि प्रसाद विज्ञान कविता नहीं लिख रहे थे परन्तु एक वैज्ञानिक तथ्य का कितना अद्‌भुत साहित्यिक प्रकटीकरण कर गये।

ऐसा ही एक उदाहरण राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त के 'यशोधरा' काव्य में मिलता है। यशोधरा शिशु राहुल को सुलाने के लिये लोरी गा रही है। तब वह कहती है–

पुष्कर सोता है निज सर में।
भ्रमर सो रहा है पुष्कर में।
गुंजन सोया कभी भ्रमर में।
सो मेरे गृह गुंजन सो। सो मेरे अंचल धन सो॥

यह भी विशुद्ध साहित्यिक काव्य है परन्तु प्रकृति के वैज्ञानिक निरीक्षण को सरस ढंग से प्रस्तुत किये जाने के कारण उसमें हम विज्ञान कविता की झलक पाते हैं।

परन्तु अब हम कुछ ऐसे उदाहरण देखेंगे जो विज्ञान कविता के रूप में ही लिखे गये। डॉ. राकेश बलूनी ने स्वास्थ्य को त्रिदेव शीर्षक कविता में निम्न शब्दों में वर्णित किया।

तीन माप हैं जीवन धन के
नाड़ी, रक्तचाप और श्वास
तीनों रहें सन्तुलित सीमित
मृत्यु नहीं आ पाती पास।
शान्त रहें निश्चिंत चलेंगे
भवसागर तर जायेंगे
हों निरोग तो यहाँ उम्र का
शतक बनाकर जायेंगे।

तीनों में से एक भी रूठा
जब भी कहीं सन्तुलन बिगड़ा
रस्सी पर चलता हो नट ज्यों
डरता डरता अकड़ा अकड़ा।

श्वास को साधो प्राणायाम से
नाड़ी रखो नियंत्रण में
शान्तचित्त व्यायाम नियंत्रित
रक्तचाप योगासन में

श्वास ब्रह्म है नाड़ी विष्णु
रक्तचाप शिवशंकर हैं
इस अखंड ब्रह्माण्ड सृष्टि में
त्रिदेव जीव के भीतर हैं।

इसी क्रम में डॉ. दिनेश चमोला 'शैलेश' की विज्ञान कविता तारामंडल की चंद पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं।

रात हुई तो स्वत: सहज ही दृष्टि अंबर तक जाती।
तब तक नभ की वह परात भी तारों से भर जाती॥
लुप्त सभी हो जाते तम से भू के दृश्य नजारे।
केवल तारामंडल ही बस रहता पास हमारे॥

न्यूटन के गति के जड़त्व के नियम का वर्णन करते हुए मैंने निम्न विज्ञानकु (वैज्ञानिक हाइकु) लिखे।

(1)
चलता है जो
चलता ही रहेगा
जो धक्का न दो।

(2)
स्थिर यदि है
तो स्थिर ही रहेगा
जो बल न दो।

(3)
मूर्ख होता जो
वो मूर्ख ही रहेगा
पढ़े नहीं जो।

(4)
जितना बल
उतनी ही तेज़ी है
न्यूटन बोल

तो इस प्रकार हम देखते हैं कि विज्ञान कविता द्वारा विज्ञान लोकप्रियकरण कार्यक्रम में यद्यपि काफी काम हो रहा है और अनेक विज्ञान कवि अपने अपने स्तर पर रचनाधर्म में लगे हुए हैं परन्तु उनकी संख्या अपेक्षाकृत बहुत कम है और स्तर और भी असन्तोषजनक। एक अच्छा विज्ञान कवि होने के लिये आवश्यक है कि वह स्वयं विज्ञान विषय में उच्च शिक्षित हो, विज्ञान के रहस्यों के मर्म तक पहुँच सका हो, मुक्त चिन्तक हो और सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है कि उसका भाषा तथा साहित्य पर उत्तम अधिकार हो। केवल इधर-उधर से गूगल इत्यादि की सहायता से थोड़ी बहुत जानकारी प्राप्त कर उसे किसी प्रकार शब्दों के जोड़ तोड़ में बैठा देने से विज्ञान कविता का अपेक्षित लक्ष्य कभी भी नहीं प्राप्त किया जा सकता।

छपते-छपते

विनम्र श्रद्धांजलि प्रो॰ धीरेन्द्र शर्मा

विज्ञान परिचर्चा के सलाहकार एवं 'भारतीय विज्ञान लेखक संघ' के संस्थापक प्रो0 धीरेन्द्र शर्मा का दिनांक 18 जून, 2024 को 93 वर्ष की आयु में आकस्मिक निधन हो गया। प्रो0 शर्मा देश के पूर्व राष्ट्रपति डॉ0 ए0पी0जे0 अब्दुल कलाम जी के अभिन्न मित्र रहे हैं। प्रो0 शर्मा भारत सरकार के वैज्ञानिक सलाहकार थे। उनके निधन से विज्ञान जगत की अपूरणीय क्षति हुई है। 02 मई 2024 को उनकी पत्नी श्रीमती निर्मला शर्मा का भी निधन हुआ।

भारतीय विज्ञान लेखक संघ देहरादून प्रभाग तथा पीपुल्स एसोसिएशन ऑफ हिल एरिया लांचर्स (पहल) की तरफ से दिनांक 20 जून, 2024 को ओवरजीफेल रंगा राव ट्रस्ट फॉर जियो साइंसेज, देहरादून के सभागार में प्रो0 शर्मा को अश्रुपूरित श्रद्धांजलि अर्पित की गई।